कुरुक्षेत्र

नवम्बर 2000

ग्रामीण विकास को समर्पित

मूल्य : सात रुपये

ग्रामीण विकास मंत्री
भारत सरकार
नई दिल्ली–110001

MINISTER OF RURAL DEVELOPMENT
GOVERNMENT OF INDIA
NEW DELHI-110001

संदेश

भारत की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या गांवों में रहती है, अतः देश के विकास के लिए ग्रामीण विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रायः इस बात को नजरअंदाज कर दिया जाता है कि ग्रामीण विकास एक जटिल प्रक्रिया है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिए विशेष प्रयासों की आवश्यकता है। ग्रामीण विकास के प्रति केवल सरकार और योजनाकारों में समर्पित भाव होना काफी नहीं, इसके लिए समाज के सभी वर्गों में समर्पण की भावना होनी चाहिए। ग्रामीण समुदाय के अलावा गैर सरकारी संगठनों, निजी कम्पनियों और सभ्य समाज के सभी लोगों, यहां तक कि अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को बदलाव की प्रक्रिया में भागीदारी निबाहने की जरूरत है।

बदलाव की प्रक्रिया को तेज करने के लिए उपयुक्त तरीके अपनाने होंगे। समस्याओं की जानकारी, विचारों, शक्तियों, सफलता तथा असफलता की कहानियों के आदान–प्रदान के साथ सही दिशा में आगे बढ़ने की आवश्यकता है। सरकार केवल गरीबी दूर करने के लिए वचनबद्ध नहीं है बल्कि श्रमशक्ति की मांग बढ़ाना चाहती है ताकि आय और चीजों की मांग बढ़े।

मुझे खुशी है कि कुरुक्षेत्र द्वारा उपलब्ध मंच के माध्यम से मैं बदलाव की प्रक्रिया को प्रभावी बनाकर एक मजबूत और समृद्ध भारत का निर्माण कर सकूंगा।

वेंकैया नायडू

(एम. वेंकैया नायडू)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय
की
प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष 46 अंक 1

कार्तिक–अग्रहायण 1922

नवम्बर 2000

संपादक
बलदेव सिंह मदान

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पता
संपादक, 'कुरुक्षेत्र',
ग्रामीण विकास मंत्रालय,
कृषि भवन, नई दिल्ली–110001
दूरभाष : 3015014
फैक्स : 011–3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

विज्ञापन प्रबंधक
पी.सी. आहुजा

आवरण सज्जा
और
रेखांकन
संजीव शाश्वती

फोटो साभार :
मीडिया डिवीजन, ग्रामीण विकास मंत्रालय

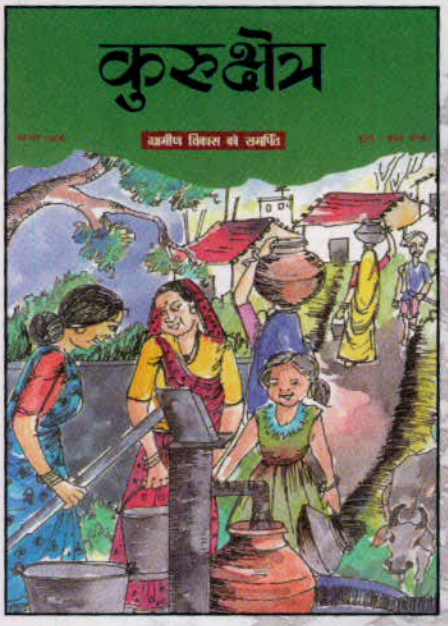

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। फोन : 6105590

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित होने वाली इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मूल्य एक प्रति : सात रुपये
वार्षिक शुल्क : 70 रुपये
द्विवार्षिक : 135 रुपये
त्रिवार्षिक : 190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 700 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

- राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन : ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल आपूर्ति का एक सराहनीय प्रयास — चेताली पाल — 4
- स्थानीय प्रजातंत्र को शक्तियों का हस्तांतरण और जन समूह — डा. दौलत राज थानवी — 8
- ग्राम सभा की एक बैठक — जगदीश प्रसाद गूर्जर — 10
- शिक्षा से ही संभव है ग्रामीण महिलाओं का विकास — डा. कृष्ण कुमार सिंह — 13
- नदी की बहती धार (कहानी) — विमलेश गंगवार 'दिपि' — 15
- सहकारिता और ग्रामीणजन — प्रो. उमराव मल शाह — 17
- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण विकास और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक — डा. एस.के. वार्ष्णेय — 20
- ग्रामीण बैंक : विकास की रजत जयंती — सुजाता सुलखे — 22
- औद्योगिक विकास के साथ बाल श्रम की समस्या — देवेन्द्र के. पटेल — 27
- विकास में वृद्धजनों की सहभागिता आवश्यक — इरा सिंह — 29
- ग्रामीण क्षेत्रों में कुपोषण की समस्या और समाधान — डा. दिनेश मणि — 32
- ग्रामीण क्षेत्रों में वैकल्पिक ऊर्जा : बायोगैस — भारत भूषण शर्मा — 38
- सम्भावित है जलाऊ लकड़ी की समस्या — शैलेन्द्र कुमार मिश्र — 40
- बड़ा उपयोगी है नीबू — मुकेश चन्द्र शर्मा — 42
- देश के आर्थिक विकास में औषधीय पौधों की खेती का महत्व — कौशल किशोर चजुर्वेदी — 43

पाठकों के विचार

कुरुक्षेत्र : अंतर्मन उर्वशी और तन तिलोत्तमा

नयनाभिराम मुखपृष्ठ और आन्तरिक चित्र–सज्जा से युक्त ग्रामीणों के लिए उपयोगी और पठनीय सामग्री समाहित किए हुए *कुरुक्षेत्र* का अगस्त 2000 अंक पढ़ा। इसका अन्तर्मन उर्वशी है और तन तिलोत्तमा। महेश चन्द्र जोशी की कहानी *किनारा* साक्षरता के महत्व को रेखांकित करती है और हंसराज भारती की कविता *पेड़* प्रकृति के साथ तादात्मय स्थापित करती है। *आज भी उपयोगी हैं बोझा ढोने वाले पशु और बैलगाड़ियां, सामाजिक समानता के लिए जरूरी है बालिका शिक्षा, उत्तर प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों के ग्रामीण विकास में ग्राम प्रधानों की भूमिका, ग्राम विकास में न्याय पंचायतों की भूमिका, शहरों में भटकती उजड़े गांवों की आत्मा,* इस अंक के उत्कृष्ट लेख हैं। *ग्रामीण बेरोजगारी : समस्या और समाधान* तथा *रेशम कीट पालन एक रोजगारपरक उद्योग* में बेरोजगारी से निबटने के कतिपय उपाय बताए गए हैं। ग्रामीण युवाओं को चाहिए कि वे इसे हल करने से पहले स्वयं मानसिक रूप से तैयार हों। सावित्री निगम ने कृषि सम्बन्धी कानूनों का बेहतर ढंग से विवेचन किया है। परन्तु इसके लिए आवश्यकता है जागरूकता की, शिक्षा की और स्वस्थ मानसिकता की।

कुरुक्षेत्र के कुशल और उत्कृष्ट सम्पादन के लिए सम्पादकीय परिवार को हार्दिक बधाई। साथ ही आवरण सज्जा के लिए सुश्री अलका नय्यर, रेखांकन के लिए श्री संजीव शाश्वती तथा चित्रों के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय के मीडिया डिवीजन कर्मियों को भी शुभकामनाएं।

राजेश हजेला, हिन्दी सलाहकार, भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, 4/10, तकिया नशरत शाह, फर्रुखाबाद–209625

'कुरुक्षेत्र' यथा नामः तथा गुणः

"सहिष्णुता और विश्वधर्म" जिसका आदर्श है, भारतीय जनसमुदाय का उत्थान जिसकी चिन्ता है तथा जिसकी विचारधारा अवसादग्रस्त

लोगों के लिए संजीवनी है उस *कुरुक्षेत्र* पत्रिका तथा समस्त सम्पादक मण्डल को मेरा प्रणाम।

अगस्त 2000, का बहुमूल्य अंक प्राप्त हुआ। यह बहुमूल्य मासिक पत्रिका सर्वप्रथम मुझे हमारे रसायन विज्ञान अध्यापक श्री हेमराज सिंह से प्राप्त हुई थी। मैं उनका सदैव आभारी रहूंगा जो उन्होंने मुझे यह पत्रिका पढ़ने के लिए प्रेरित किया। इस पत्रिका को पढ़ने पर पूरे भारत की ग्रामीण व्यवस्था तथा सरकार द्वारा उठाए जा रहे कदमों का सम्पूर्ण विवरण मिल जाता है। प्रत्येक अंक ज्ञानवर्धक अमूल्य निधि के समान है। इस पत्रिका की सभी लेखों की विषयवस्तु अपने में सम्पूर्ण तथा अलौकिक प्रतीत होती हैं। एक अंग्रेजी साहित्यकार Bacon ने कहा है कि – "Some books are to be tested, others to be swallowed, some few to be chewed and digested."

यह वाक्य पूरी तरह इस पत्रिका पर चरितार्थ हो रहा है। वास्तव में इस पत्रिका का प्रत्येक अंक संग्रहणीय है। मैं आशा ही नहीं बल्कि पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूं कि यह पत्रिका "भारत के ग्रामीण जीवन" को चित्रित करने वाली सर्वश्रेष्ठ पत्रिका है। वास्तव में यह पत्रिका ग्रामीण विकास में एक मील का पत्थर साबित हो रही है। भारत गांवों का देश है अतः गांवों का विकास अर्थात देश का विकास।

अगस्त अंक में प्रकाशित – *ग्रामीण बेरोजगारी–समस्या और समाधान, उत्तर प्रदेश सहकारी विकास बैंक, रेशम कीट पालन एक रोजगार परक उद्योग, उत्तर प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों के ग्रामीण विकास में ग्राम–प्रधानों की भूमिका, बहुत आशाएं हैं पवन ऊर्जा से* इत्यादि लेख गरीबी हटाने, किसानों को प्रोत्साहित करने तथा युवा वर्ग को नई दिशा देने में काफी हद तक सहयोग देंगे। सृष्टि का मूल–नारी है अर्थात नारी–शिक्षा अत्यावश्यक है। शिक्षा का अर्थ है – आत्मा का विकास, जीवन का विकास, समाज का विकास और समूची मानवता का विकास। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि यदि भारत की ग्रामीण जनता को जागरूक कर सकती है तो सिर्फ *कुरुक्षेत्र*। मेरा सम्पूर्ण भारतवासियों के लिए केवल एक संदेश है –

उठ जाग मुसाफिर भोर हुई, अब रैन कहां जो सोवत है,
जो जागत है वो पावत है, जो सोवत है वो खोवत है।

यह पत्रिका *यथा नामः तथा गुणः* कथन को चरितार्थ करती हुई दिखाई देती है।

देव प्रकाश, जवाहर नवोदय विद्यालय, संत रविदास नगर, भदोही, उत्तर प्रदेश–221304

ग्रामीण क्षेत्र भारत का कुरुक्षेत्र

"भारत गांवों में बसता है" उक्ति मैंने आज तक अपनी शिक्षा के दौरान केवल सुनी और पढ़ी थी। मैंने इसे एक उक्ति से अधिक और कुछ नहीं समझा था। परंतु जब मुझे मासिक पत्रिका *कुरुक्षेत्र* के अगस्त 2000 के अंक, जो कि इस पत्रिका का मेरे जीवन का पहला अंक था, से रू–ब–रू होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ तो इसे पढ़ने के उपरान्त वास्तव में मुझे अनुभव हुआ कि भारत गांवों में बसता है। मेरा जन्म, पालन–पोषण, शिक्षा आदि सभी शहरी क्षेत्रों में ही हुए हैं। अतः मुझे कभी ग्रामीण जन–जीवन को निकट से देखने का सुअवसर प्राप्त नहीं हुआ। परन्तु *कुरुक्षेत्र* को पढ़कर वास्तव में मुझे लगा कि *ग्रामीण क्षेत्र* ही भारत का *कुरुक्षेत्र* है। वर्तमान में मैं "भारतीय सिविल–सेवा" परीक्षा की तैयारी कर रहा हूं। ऐसे में ग्रामीण क्षेत्र के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने हेतु मुझे एक पत्रिका की तलाश थी। *कुरुक्षेत्र* के रूप में मेरी यह तलाश पूर्ण हो गई है।

इस पत्रिका के सभी लेख ज्ञानवर्धक और उत्कृष्ट कोटि के हैं। इस अंक को पढ़ने के दौरान मुझे एक नया अनुभव हुआ, मैंने जाना कि इस पत्रिका की पहुंच ग्रामीण भारत में कितनी गहरी है।

महिलाएं व ग्राम–सभा, सामाजिक समानता के लिए जरूरी है बालिका शिक्षा, राजस्थान में नया शिक्षा आन्दोलन – शिक्षा दर्पण–2000 इत्यादि सभी लेख हृदय को छू लेने वाले थे।

विजय विज, मकान नं. 355, वार्ड नं. 4, गांधी बस्ती, श्रीगंगा नगर, राजस्थान

ग्रामीण भारत के सांस्कृतिक पहलुओं का समावेश किया जाए

कुरुक्षेत्र का अगस्त 2000 का अंक ग्राम संस्कृति की महक को काफी गहरे रूप से महसूस कराने में सफल रहा। *महिलाएं और ग्राम सभा* रिपोर्ट से नई पंचायती राज व्यवस्था के तहत ग्राम स्तर पर हो रहे बदलाव, उभरते सवाल, टूटती रूढ़िवादी परम्पराओं का अहसास होता है। ऐसे तमाम अनुभव सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में सक्रिय लोगों को प्रोत्साहित करेंगे तथा उनकी रचनाधर्मिता को बढ़ाएंगे।

उक्त अंक में यद्यपि ग्रामीण परिवेश से जुड़े सवालों पर लेख विचारोत्तेजक रहे, लेकिन इसमें देश के विभिन्न राज्यों का तुलनात्मक अध्ययन अथवा हर क्षेत्र में संचालित स्वैच्छिक और शासकीय गतिविधियों को और ज्यादा स्थान मिल सके, तो यह पाठकों के हित में जानकारी युक्त और शिक्षाप्रद होगा।

पत्रिका की साज–सज्जा, कलेवर, प्रिंटिंग तथा कागज की क्वालिटी बहुत उम्दा किस्म की है। यदि इसमें विभिन्न क्षेत्रों की रिपोर्ट, सामजिक परिवेश और आर्थिक पक्ष के साथ सांस्कृतिक पहलुओं का भी समावेश किया जा सके तो पत्रिका के प्रसार के साथ–साथ पाठकों के लिए भी उपयोगी होगा।

सुभाष बंसल, पत्रकार, मोती बाजार, युगड्डा (पौड़ी गढ़वाल), उत्तरांचल–246127

शिक्षा दर्पण कार्यक्रम के आंकड़ों पर प्रश्न चिन्ह

राजस्थान में नया शिक्षा आन्दोलन चलाया गया और मई 2000 में इसके सक्रिय क्रियान्वयन के लिए ग्रामीण क्षेत्रों के शिक्षा विभाग से जुड़े कर्मचारियों और अधिकारियों ने सर्वेक्षण कार्य में हिस्सा लिया। इस परियोजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में एक सरल और यथार्थ परिवार–वार सघन सर्वेक्षण सम्पन्न किया गया। इसका मूल उद्देश्य था ग्रामीण क्षेत्रों में शत–प्रतिशत साक्षरता। राजस्थान सरकार कृत संकल्प है कि आगामी चार–पांच वर्षों में निरक्षरता का उन्मूलन अनिवार्य रूप से कर दिया जाएगा।

शिक्षाकर्मियों ने निर्देशित व्यवस्था के अनुरूप कार्य किया। कहीं–कहीं फर्जी नामांकन भी देखने को मिले। उसका निदानात्मक क्या विकल्प सोचा गया, इस समस्या का सार्वजनीकरण कहीं ज्ञात नहीं हो सका। भावी राष्ट्र निर्माता ही यदि ऐसी अप्रासंगिक गतिविधियों में संलग्न हों तो अपेक्षित लक्ष्यों के प्रति कैसे आश्वस्त हुआ जा सकता है?

शिक्षा दर्पण–2000 के शिक्षा आन्दोलन में भी, वही शिक्षाकर्मी कार्यरत थे, तो क्या उनका सर्वेक्षण अक्षरतः शत प्रतिशत सच मान लिया जाए? अभिप्रायः यह है कि सरकार के कार्यक्रमों को प्रायः "आंकड़ों के कार्यक्रम" समझने की आम धारणा बन चुकी है। अतः शिक्षा दर्पण–2000 के आंकड़ों की विश्वसनीयता के लिए कोई ऐसा "क्रॉस सिस्टम" अपनाया जाना चाहिए ताकि निर्धारित लक्ष्यों को अनुरूपता प्रदान की जा सके।

एम. राज राकेश, उप–प्रधानाचार्य, हैपी सीनियर सैकण्डरी स्कूल, अलवर–301001

सिविल सर्विसेज की परीक्षाओं के लिए उपयोगी पत्रिका

अगस्त 2000 का अंक मेरे सामने दुकान पर पड़ा था। अचानक मेरी नजर इसके मुख्य पृष्ठ पर छपे चित्र पर पड़ी, जिसे देखते ही मुझे अहसास हो गया कि यह "ग्राम विकास" से सम्बन्धित पत्रिका है। इसे पढ़ने के बाद पता लगा कि यह सिविल सेवा की तैयारी करने वाले छात्रों के लिए एक उपयोगी पत्रिका है।

कुरुक्षेत्र के अगस्त अंक में प्रकाशित लेख *'सामाजिक समानता के लिए है बालिका शिक्षा'* एक सफल तथा अच्छा सुझाव है।

मैं भी सिविल सर्विसेज परीक्षा की तैयारी कर रहा हूं तथा ग्रामीण क्षेत्र से हूं। इस पत्रिका के माध्यम से मुझे ग्रामीण क्षेत्र की विकास योजनाओं के बारे में काफी जानकारी मिली। मैंने इस पत्रिका के अगस्त अंक से नियमित अवलोकन करना शुरू किया है।

सरकार द्वारा महिला ग्राम प्रधानों के लिए स्थान सुरक्षित कर दिए जाने के बाद भी निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों का पूरा कार्यभार उनके परिवार के पुरुष सदस्य ही क्रियान्वित कर रहे हैं। यह महिलाओं पर हो रहे शोषण का प्रत्यक्ष उदाहरण हैं जिसे समाज से खत्म करना अत्यन्त आवश्यक है।

यशवर्धन सिंह यादव, कम्प्यूटर विभाग, मदनमोहन मालवीय इन्जीनियरिंग कालेज, गोरखपुर–273010

देश के कई राज्यों के गांवों में पेयजल की समस्या आज भी बनी हुई है। इस समस्या के निदान के लिए सरकार ने 1972–73 में त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति योजना शुरू की जिसका उद्देश्य पेयजल की कमी को दूर करने के लिए राज्यों को सहायता करना था। 1986 में इस योजना को प्रौद्योगिकी मिशन का रूप दिया गया और इसका नाम राष्ट्रीय पेयजल मिशन रखा गया। 1991 में इसका नाम राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन कर दिया गया। इस मिशन के तहत पेयजल की समस्या को सुलझाने के लिए जो प्रयास किए जा रहे हैं पढ़िए उसका ब्यौरा इस लेख में।

राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन
ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल आपूर्ति का एक सराहनीय प्रयास

चेताली पाल*

हम जब भी जल शब्द का उच्चारण करते हैं तो अनायास ही हमें अपने प्राचीन ग्रन्थों की याद आती है जिनमें कहा गया है जल ही जीवन है।

मानव और अन्य जीवों के लिए भोजन से अधिक आवश्यक पेयजल है। कृषि उत्पादन के लिए भी जल की आवश्यकता उतनी ही महत्वपूर्ण है। यहां तक कि हमारे बड़े–बड़े उद्योग भी जल के बिना ठप पड़ जायेंगे।

स्वतंत्रता–प्राप्ति के 53 वर्षों के बाद जब हम अपने विकास की ओर देखते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत से क्षेत्रों में हमने काफी सफलता प्राप्त की है। यहां तक कि हम परमाणु–सम्पन्न राष्ट्रों की श्रेणी में भी आ गए और हमारे वैज्ञानिक चांद तक पहुंचने की योजना बना रहे हैं। लेकिन इन सफलताओं को हासिल करने के लिए हमने प्राकृतिक सम्पदा का इस निर्ममता के साथ दोहन किया है कि आज हमारे सामने अक्षरणीय विकास का लक्ष्य एक समस्या बनकर खड़ा हो गया है। इसी संदर्भ में पेयजल की समस्या हमारे सामने आती है। जब हम पेयजल की बात करते हैं तो

* रिसर्च एसोसिएट, जन साधन अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

हमारा मतलब स्वच्छ और सुरक्षित पेयजल से है। आज नगरों और महानगरों में जो तरह–तरह की महामारियां फैलती हैं उनसे हमारा ग्रामीण समाज भी अछूता नहीं है और इनका कारण है शुद्ध पेयजल का अभाव। इसके पहले कि हम ग्रामीण पेयजल समस्या और राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन पर चर्चा करें यह आवश्यक हो जाता है कि पेयजल समस्या पर भी थोड़ा विचार किया जाए।

आए दिन हम समाचारपत्रों में पढ़ते हैं कि बड़े–बड़े महानगरों में पीने के पानी की समस्या जटिल होती जा रही है। यहां तक कि राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली को भी पेयजल के लिए हरियाणा, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश जैसे समीपवर्ती राज्यों पर निर्भर रहना पड़ता है। इसके बावजूद भी जो जल हमको मिलता है वह दूषित होता है। इसकी वजह से हैजा, प्लेग और अन्य उदर रोग पनपते हैं। एक आकलन के अनुसार दस साल के बाद चेन्नई जैसे शहर में पीने के पानी का जो अभाव आज है उससे करीब पचास गुणा और बढ़ जाने की आशंका है। हमारा सारा ध्यान इन बड़े–बड़े शहरों पर इसलिए जाता है कि दूरदर्शन और अन्य संचार माध्यमों से शहरों की समस्याओं को तो उजागर किया जाता है लेकिन भारत के 75 प्रतिशत लोग ग्रामवासी हैं और उनकी तरफ शायद ही शहरी विशेषज्ञों का ध्यान जाता हो। हमारे राजस्थान, गुजरात जैसे राज्य हैं जहां पर पेयजल के लिए महिलाओं को एक घड़े पानी के लिए दस–दस किलोमीटर तक पैदल चलना पड़ता है और उस एक घड़े पानी पर पूरे परिवार को दो दिनों तक निर्भर रहना पड़ता है। स्नान करना तो दिवास्वप्न के समान है, खासकर गर्मी के महीनों में जब पानी की किल्लत बढ़ जाती है। इन इलाकों के बारे में तो हमें जानकारी मिल जाती है लेकिन दूरदराज के पर्वतीय इलाकों, बिहार, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा जैसे पिछड़े राज्यों में यह समस्या कितनी भयावह है इसका बयान एक प्रत्यक्षदर्शी ही कर सकता है। इसका यह मतलब नहीं कि हमारी केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारों का ध्यान इस समस्या की ओर बिल्कुल ही नहीं गया है। वास्तविकता तो यह है कि स्वतन्त्रता–प्राप्ति के तुरंत बाद ही पं. जवाहरलाल नेहरू, जो भारत के प्रथम प्रधान मंत्री थे, उनका ध्यान इस दिशा में गया और उन्होंने ग्रामीण जनता को पेयजल, स्वास्थ्य, रोजगार और साक्षरता प्रदान करने के लिए एक बहुत ही सराहनीय योजना चलाई। इसे सामुदायिक विकास योजना के नाम से जाना गया। यह योजना पहले देश के मात्र 52 जिलों में प्रयोग के तौर पर 1952 में चलाई गई लेकिन 1953 में इसे देश व्यापी रूप दे दिया गया और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के नाम से जाना गया। इस योजना के अन्तर्गत दूरदराजों के गांवों में पेयजल की आपूर्ति करने के लिए कुएं खुदवाने की व्यवस्था की गई और उसका खर्च केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच भागीदारी के आधार पर होना था। इस कार्यक्रम को काफी सफलता मिली लेकिन इसका लाभ समाज के उस वर्ग को मिला जिसके पास यह सुविधा पहले से ही थी। दूसरे शब्दों में पिछड़ी जातियों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य दलितों को इस सुविधा से वंचित रखा गया।

अतः पेयजल से संबंधित प्रयास स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद लगातार चलते रहे लेकिन बिचौलियों तथा समाज के मजबूत वर्ग ने ही इसका लाभ उठाया। 1967 में जब पूरे देश में सूखा पड़ा तथा पेयजल और सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध कराने की गम्भीर चुनौती हमारे सामने आई तो पुनः इस दिशा में एक और कदम उठाया गया और वह

महिलाओं को आज भी एक दो–घड़े पानी के लिए मीलों पैदल चलना पड़ता है

था गांवों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के मुहल्लों में हैंडपम्प लगवाने का कार्यक्रम। इसका लाभ करीब 25 प्रतिशत लाभार्थियों को मिला लेकिन 75 प्रतिशत का उपयोग समाज के प्रबुद्ध वर्ग के लोगों ने अपने हित में किया क्योंकि ब्लाक प्रशासन ने इस कार्यक्रम में जनसहभागिता और पंचायतों की भागीदारी को सुनिश्चित नहीं किया था।

इसके पश्चात् 1989 में जब राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम गरीब जनता के लिए चलाए गए तो उनकी एक उपयोजना के रूप में दस लाख कुओं की योजना चलाई गई जिसका वित्तीय प्रबंध इन दोनों योजनाओं के मद से होना था। इस उपयोजना का मुख्य उद्देश्य गरीबों और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिए तथा हाशिए पर खड़े किसानों के लिए मुफ्त सिंचाई की व्यवस्था करना। बाद में जब ये रोजगार योजनाएं जवाहर रोजगार योजना में विलीन हो गईं तो दस लाख कुओं की योजना को भी उसी में शामिल कर दिया गया।

हमारे राजस्थान, गुजरात जैसे राज्य हैं जहां पर पेयजल के लिए महिलाओं को एक घड़े पानी के लिए दस–दस किलोमीटर तक पैदल चलना पड़ता है और उस एक घड़े पानी पर पूरे परिवार को दो दिनों तक निर्भर रहना पड़ता है।

यूं तो पेयजल या ग्रामीण जल आपूर्ति की दिशा में जैसा कि पहले कहा चुका है प्रयास प्रथम पंचवर्षीय योजना में ही शुरू हो गए थे लेकिन 1954 में ग्रामीण जल आपूर्ति, स्वच्छता कार्यक्रम और स्वास्थ्य को केंद्रीय सरकार ने सामाजिक क्षेत्र का दर्जा दिया और स्थानीय विकास को सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अंतर्गत रखा गया। इसके अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में नए कुओं का निर्माण, पुराने कुंओं की मरम्मत और हैंडपम्प लगवाना था।

चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जिन क्षेत्रों में पेयजल की कमी थी तथा जहां पर जल से उत्पन्न बीमारियों का आक्रमण होता था वहां के लिए 1972–73 में केन्द्र द्वारा त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम लागू किया गया लेकिन पांचवी पंचवर्षीय योजना में जब न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम लागू किया गया तो इसे वापिस ले लिया गया। लेकिन शीघ्र ही 1977–78 में इसे पुनः लागू किया गया।

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत ऐसे गांवों को पेयजल की आपूर्ति की जानी थी जहां पर पेयजल का अभाव था तथा पेयजल को कोई सुरक्षित स्रोत नहीं था। इस कार्यक्रम को निम्नलिखित आधारों पर लागू करना था :

वैसे गांव जहां पर निश्चित पेयजल उपलब्ध नहीं है तथा मैदानी क्षेत्रों में 1.6 किलोमीटर के भीतर और पर्वतीय इलाकों में 100 मीटर की ऊंचाई के अंतर पर जल मुहैया कराना। साथ ही वैसे क्षेत्र जहां महामारी के रूप में जल से उत्पन्न बीमारियां जैसे – हैजा, पेचिश आदि फैलती हो साथ ही जिन क्षेत्रों का पानी नमकीन हो तथा जिसमें लौह तत्व और फलोराइड की मात्रा अधिक हो, उन क्षेत्रों में स्वच्छ जल मुहैया कराना। इसके अन्तर्गत प्रतिदिन प्रति व्यक्ति के लिए 40 लीटर जल मुहैया कराने का लक्ष्य रखा गया था। इस पंचवर्षीय योजना में सरकारी आंकड़ों के अनुसार 54 प्रतिशत वैसे क्षेत्रों में स्वच्छ जल मुहैया करा दिया गया था तथा सातवीं पंचवर्षीय योजना में स्वच्छ पेयजल विहीन गांवों की संख्या करीब 1,61,722 थी। 1986 में राष्ट्रीय पेयजल मिशन शुरू किया गया तथा 1991 में इसका नाम राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन कर दिया गया। अक्तूबर 1999 में एक नया पेयजल आपूर्ति विभाग सृजित किया गया।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम केन्द्र सरकार की सहायता से राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में 1972–73 में लागू हुआ और इस कार्यक्रम का क्रियान्वयन एक मिशन के रूप में किया गया जिसका ध्येय था नई तकनीक द्वारा पेयजल से संबंधित जितने भी प्रबन्धन हों वे सभी जनता के हित में हों। इसलिए 1986 में इसका नाम बदल कर राष्ट्रीय पेयजल मिशन रखा गया। उस समय सामाजिक क्षेत्र में जो पांच कार्यक्रम लागू किए गए उनमें यह भी एक था और 1991 से इसे राजीव गांधी पेयजल मिशन के नाम से जाना जाता है।

ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम राज्य सूची के अन्दर आता है और राज्य सरकारें इसे न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्दर लागू करती हैं। केन्द्र सरकार राजीव गांधी पेयजल मिशन के तहत राज्य सरकारों को सहायता प्रदान करती है ताकि ग्रामीण पेयजल समस्या शीघ्रातिशीघ्र हल हो। इस मिशन के उद्देश्य हैं: ऐसे बचे हुए क्षेत्रों को पेयजल मुहैया कराना जिनमें पेयजल आपूर्ति का कार्यक्रम या तो शुरू नहीं किया गया है या आंशिक रूप में शुरू किया गया है या यदि किया गया है तो उस पेयजल की गुणवत्ता ठीक नहीं है। कई तरह की तकनीकों को मिलाकर एक समुचित तकनीक हासिल करना, जो कार्यक्रम चल रहे हैं, उन को प्रभावी बनाना, उनको मूल्य प्रभावी बनाना, ग्रामीण जनता में स्वच्छ पेयजल के प्रति जागरूकता पैदा करना और लगातार जल आपूर्ति होती रहे, उसके लिए अक्षरणीय जल स्रोत उपलब्ध कराना इसके अन्य उद्देश्य हैं।

इस मिशन के उद्देश्य हैं: ऐसे बचे हुए क्षेत्रों को पेयजल मुहैया कराना जिनमें पेयजल आपूर्ति का कार्यक्रम या तो शुरू नहीं किया गया है या आंशिक रूप में शुरू किया गया है या यदि किया गया है तो उस पेयजल की गुणवत्ता ठीक नहीं है।

जहां तक इस कार्यक्रम के लाभार्थियों का प्रश्न है, ग्रामीण जनसंख्या का वह हिस्सा इसका हकदार होगा जिनको या तो आंशिक रूप से जल मिलता है या बिल्कुल ही नहीं मिलता या फिर अगर मिलता भी है तो वह जल पीने योग्य नहीं है। नवीं पंचवर्षीय योजना में इसकी प्राथमिकताएं हैं : वर्तमान त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति सप्लाई मिशन के तहत लाभार्थियों के लिए जो मानदण्ड रखे गए हैं

उसको बदलकर आवश्यकता अनुसार निर्धारित मानदण्ड तैयार करना। राज्यों के हिस्से जिनमें ये प्राथमिक सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं तथा जो सूखाग्रस्त हैं, रेगिस्तानी तथा पहाड़ी क्षेत्र हैं उनका अपने जल संसाधन बढ़ाने के लिए ज्यादा धन मुहैया कराना। इस मिशन के उप कार्यक्रमों को कुशलतापूर्वक चलाने के लिए राज्य सरकार द्वारा सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना। साथ ही संगठन और प्रबंधन को ध्यान में रखते हुए योजना के अन्तर्गत राशि 10 प्रतिशत से बढ़ाकर 15 प्रतिशत करना और इसे वार्षिक आधार देना।

मानव संसाधन विकास शोध तथा विकास सूचना, शिक्षा, यातायात तथा प्रबन्धन सूचना व्यवस्था जैसे कार्यक्रम को शत् प्रतिशत धन मुहैया कराना। साथ ही मांग पर आधारित ग्रामीण पेयजल आपूर्ति को सामुदायिक संस्था के रूप में स्वीकारा जाना जिसके तहत खर्चे का भार सरकार और समुदाय दोनों मिलकर करें और अन्त में वैसे कार्यक्रमों को मुख्यधारा में लाना जो बिना जन सहभागिता के आधार पर चलाए जाते हैं। दूसरे शब्दों में जन सहभागिता पर बल देना, साथ ही जल गुणवता को बनाए रखने के लिए निरीक्षण और पर्यवेक्षण व्यवस्था को संस्थागत स्वरूप देना। जहां तक इस कार्यक्रम की उपलब्धियों का प्रश्न है तो 14,30,663 ग्रामीण आवासों में से 13,87,670 आवासों को सुरक्षित पेयजल मिल रहा है। त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम के तहत ही ऐसे प्रयत्न किए जा रहे हैं कि इनकी जल स्रोतों की अक्षरणीयता बनी रहे और जनता की सहभागिता भी सुनिश्चित रहे। उन क्षेत्रों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है जहां जल में फ्लोराइड, आर्सनिक तथा लौह तत्व जैसे दूषित तत्व पाए जाते हैं।

जहां तक वित्तीय व्यवस्था का प्रश्न है इसके अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा दी जाने वाली राशि आम तौर पर वित्त मंत्रालय के निर्देश के मुताबिक दो किस्तों में दी जाती है। पहली किस्त बिना शर्त के अप्रैल महने में जारी कर दी जाती है लेकिन अपवाद स्वरूप हैं वैसे राज्य और केन्द्रशासित प्रदेश जो गत वर्ष की राशि खर्च नहीं कर पाए हैं। उनको यह राशि सशर्त दी जाती है। अगर पहले वर्ष की राशि भी राज्य सरकार द्वारा नहीं ली गई है ऐसी परिस्थिति में एक निर्धारित परिपत्र पर राज्य सरकार द्वारा आग्रह करने पर ही निर्धारित राशि जारी की जाती है।

दूसरी किस्त पहली किस्त के सफल उपयोग का प्रमाण–पत्र मिलने के बाद ही जारी की जाती है जिसके लिए निर्धारित परिपत्र पर राज्य सरकार का प्रस्ताव तथा प्रगति प्रतिवेदन आवश्यक है। साथ ही खर्च की गई राशि के 60 प्रतिशत के अलावा त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम तथा न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत जारी की गई रकम तथा गत वर्ष की प्रथम किस्त की बची राशि उस वर्ष के दिसम्बर के अन्त तक खर्च हो जानी चाहिए।

दूसरी शर्त यह है कि गत वर्ष का खर्च किया गया परिपत्र महालेखा परीक्षक के यहां जल्द पहुंच जाना चाहिए। इसके अलावा जो उपयोग रसीद का प्रमाण–पत्र होगा उस पर मुख्य अभियन्ता तथा विभागीय सचिव के हस्ताक्षर होने चाहिए जिसमें लिखा होना चाहिए कि राशि को प्राथमिकता के आधार पर ही खर्च किया गया है। यह भी लिखा होना चाहिए कि तकनीकी रूप से परियोजना के लागू होने से छह महीने पहले ही उसकी मंजूरी मिल चुकी थी। साथ ही 30 अप्रैल से पहले खर्चे का जिलेवार ब्यौरा उपलब्ध हो। यदि इन सारी शर्तों को पूरा पाया जाता है तभी दूसरी किस्त जारी की जाती है। अगले वर्ष का प्रस्ताव 31 दिसम्बर से पहले पहुंच जाना चाहिए। यदि दूसरी किस्त को जारी करने हेतु प्रस्ताव देर से पहुंचता है तो उसमें कटौती की जा सकती है और उतनी ही राशि जारी की जाती है जितनी कि वास्तव में खर्च की गई है। इसके अलावा समय–समय पर सरकार द्वारा और भी शर्तें जारी की जा सकती हैं।

जहां तक इस राशि का केन्द्र सरकार द्वारा जारी करने का प्रश्न है उसके लिए त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम के तहत निम्नलिखित शर्तें निर्धारित की गई है :

- ग्रामीण जनता को सत्ता हस्तानान्तरण करना तथा परियोजना में उनकी पूरी भागीदारी सुनिश्चित करना जैसे निर्णय लेते समय, परियोजनाओं का चयन करते समय तथा परियोजनाओं के प्रबन्ध में जनता की भागीदारी होनी चाहिएं। साथ ही गांवों की जल एवं स्वास्थ्य समिति की क्षमता को बढ़ा दिया जाना चाहिए।
- एक समन्वित सेवा प्रदाय यान्त्रिक के रूप में सारे कार्यक्रमों को एक छत के नीचे लाना होगा। इस योजना का उपयोग करने वालों को सम्पूर्ण राशि का 10 प्रतिशत वहन करना होगा। यदि कोई राज्य अपना हिस्सा इसमें नहीं दे पाता है या स्थिति में सुधार नहीं करता है तो उसकी राशि दूसरे राज्यों को दे दी जाएगी। उपयोजनाओं के लिए आवश्यकता पर आधारित राशि निर्धारित होगी जिसे केन्द्र और राज्य सरकार 75:25 की भागीदारी पर वहन करेगें।

जहां तक इस परियोजना के कार्यान्वयन का प्रश्न है उसकी जिम्मेदारी राज्य सरकारों के जन स्वास्थ्य और यान्त्रिकी विभागों को सौंपी गई है।

यूं तो राजीव गांधी ग्रामीण पेयजल मिशन 1991 से कार्यरत है लेकिन 1998 में मिशन ने रख–रखाव और मूल्यांकन अध्ययन के आधार पर इस योजना का पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और बिहार में जानी–मानी शोध संस्थाओं द्वारा सर्वेक्षण कराया। इनके मूल्यांकन आने शुरू हो गए हैं।

अन्त में इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि पेयजल की समस्या काफी गम्भीर समस्या है खासकर ग्रामीण क्षेत्र में लेकिन इसके प्रति सरकार जागरूक है और प्रयास किए जा रहे हैं कि हर गांव को शुद्ध पेयजल मुहैया कराया जा सके। बहुत सारी योजनाएं इसलिए ग्रामीण स्तर पर असफल हो जाती हैं क्योंकि उनमें जनता की सहभागिता सुनिश्चित नहीं हो पाती है, साथ ही परियोजनाओं को पूरा होने पर उनके रख–रखाव का कोई उचित प्रबन्ध नहीं होता। उनमें मौजूद कमियों को दूर नहीं किया जाता तो योजना ही ठप हो जाती है। इसलिए इस दिशा में ग्राम पंचायतें यदि प्रभावकारी भूमिका निभाएंगी तो योजनाओं को सफल बनाने में सहायता मिलेगी। ❑

स्थानीय प्रजातंत्र को शक्तियों का हस्तांतरण और जनसमूह

डा. दौलत राज थानवी

अप्रैल 1999 में 73वें संविधान संशोधन के अंतर्गत पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान कर दिया गया और लगभग सभी राज्यों ने पंचायती राज कानून बनाकर इन संस्थाओं को अधिकार दिए गए हैं। लेकिन मतदाताओं यानी लोगों को इन संस्थाओं के बारे में ज्यादा जानकारी अभी तक नहीं है। लेखक ने राजस्थान में एक सर्वेक्षण का हवाला देते हुए बताया है कि चुनाव से पहले केवल 15.5 प्रतिशत मतदाताओं को ही मालूम था कि चुनाव किन पदों के लिए, कब और कहां हो रहे हैं। लेखक का सुझाव है कि एक विराट अभियान चलाकर मतदाताओं को जागरूक बनाया जाए तभी पंचायती राज का सपना साकार हो सकेगा।

संविधान के नीति–निर्माताओं और भारतीय संविधान सभा के सभासदों ने संविधान के नीति–निदेशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 40 में यह लिखा कि संघीय सरकार सत्ता का हस्तांतरण धरातलीय प्रजातंत्रीय संस्थाओं को करने के लिए नियम बनाएगी जिससे 2,25,000 ग्रामीण संस्थाओं में शक्ति तथा सत्ता सम्पन्न प्रजातंत्रीय गणराज्य देश में स्थापित हो सकेंगे। 1949 से यह यात्रा प्रारम्भ हुई परन्तु आशा के विपरीत 1952 में सामुदायिक विकास योजना से राष्ट्रीय ग्रामीण संस्थाओं के लिए कलेक्टर राज को स्थापित कर दिया गया और सत्ता के हस्तांतरण से ग्रामीण धरातलीय संस्थाओं को वंचित किया गया। इसका कारण संभवतः यही रहा होगा कि ग्रामीण भारत को सामंती ढांचे पर जातिगत विषमताओं का क्षेत्र माना जाता रहा। भारत के पहले प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भी यही सोचा कि गांवों में वैचारिक संकीर्णता है और वहां पर बौद्धिक तथा सांस्कृतिक पिछड़ापन है। इस सोच के बावजूद 1959 में अक्तूबर दो के दिन गांधी जयंती के अवसर पर पंडित नेहरू ने लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना का उद्घाटन राजस्थान के नागौर शहर में करके एक क्रांतिकारी कदम उठाया। वो कदम था – सत्ता को धरातलीय संरचनाओं में हस्तांतरण करने के कानून बनाने की प्रक्रिया।

2 अक्तूबर 1959 का दिन ग्राम स्तर की पंचायतों के लिए सत्ता में भागीदारी की एक छोटी परन्तु महत्वपूर्ण पहल थी जिसने संघीय तथा राज्य स्तरीय प्रशासन में ग्रामीण इकाइयों को एक अस्पष्ट स्थान दिया। अस्पष्ट स्थान की अवधारणा यह रही कि राज्य सरकारों में कलेक्टर राज के तहत इन संस्थाओं के चुनाव और विकास कार्य सम्पन्न होने लगे थे। ऐसा इसलिए हुआ कि प्रधान तथा जिला प्रमुखों और सरपंचों के रूप में नए जनप्रतिनिधि उभरने लगे जिन्हें सांसद और विधायक अपनी प्रभुता के लिए खतरा मानने लगे। परिणाम यह हुआ कि पंचायती राज संस्थाओं के 1961 तथा 1965 में चुनाव हुए और फिर 13 वर्षों बाद 1978 में हुए और बाद में 1981–82 में। इस तरह राज्य यानी विधानसभाएं नहीं चाहती थीं कि ग्राम स्तर पर संस्थाओं को सत्ता की स्वायत्तता सौंपी जाए।

सत्ता का हस्तांतरण करने संबंधित नियम बनाना तो दूर इन संस्थाओं को अक्षम, अकुशल, भ्रष्ट और नकारात्मक गुणों का समुच्य सिद्ध करने का प्रयास किया। राज्य स्तर की नौकरशाही भी विधायकों के पीछे–पीछे चलती रही और जनमानस में यह धारणा प्रसारित की गई कि ग्राम स्तर के धरातलीय प्रजातंत्र को सफल नहीं कहा जा सकता क्योंकि वहां जाति और सामंती संरचना का समाज है। इन सभी नकारात्मक विचारों के साथ बुद्धिजीवी और सामाजिक वैज्ञानिकों ने लगातार प्रयास किए और 1993 में 73वें संवैधानिक संशोधन से ग्राम स्तरीय पंचायतों को संविधान सम्मत

ढांचागत संस्थाएं घोषित कर संविधान के नौंवे भाग से जोड़ दिया गया। 1995 में पहले चुनावों से राजस्थान में इन संस्थाओं के नेतृत्व में सामाजिक संरचना के अनुरूप सामाजिक परिवर्तन की भावना जाग्रत हुई। महिलाओं, कमजोर दलित वर्गों के साथ अन्य पिछड़े वर्गों के लोगों को ग्रामीण लघु गणराज्यों में सत्ता सहभागिता का अवसर दिया गया। राजस्थान सरकार ने जनवरी 2000 में नया अध्यादेश लागू करके 29 कार्यों की सत्ता का हस्तांतरण इन संस्थाओं को करके एक नया प्रगतिशील कदम उठाया और पंचायती राज चुनाव आयोग ने जनवरी–फरवरी 2000 में पंचायतों के चुनाव भी सफलतापूर्वक करवाए। इसमें लगभग 63 प्रतिशत पंजीकृत मतदाताओं ने मतदान करके 9,813 सरपंचों और 1,03,712 ग्राम वार्ड पंचों को चुना। इन्हीं के द्वारा राज्य में लघु गणतंत्रीय व्यवस्था स्थापित करने की आशा की गई।

हस्तांतरण विधि से कानून द्वारा ग्रामीण धरातलीय प्रजातंत्र को जो सत्ता सौंपी है उसके प्रति संदेह इसी बात का है कि वहां के मतदाता निहित स्वार्थी नेतृत्व के इशारों पर नकारात्मक कार्य करने लगे हैं। उनकी जन–चेतना को जाग्रत नहीं किया गया है। सन् 2000 में हुए पंचायत चुनावों में मतदाताओं का व्यवहार इस नकारात्मकता पर प्रकाश डालता है। वे सत्ता के हस्तांतरण संबंधित कानूनों और प्राधिकारों से बेखबर हैं। उनका व्यावहारिक अध्ययन सामाजिक विज्ञान संस्थान नई दिल्ली ने प्रो. पी.सी. माथुर (राजस्थान) द्वारा राजस्थान के क्षेत्रों में करवाया। प्रो. पी. सी. माथुर के निर्देशन में मैंने भी ग्रामीण क्षेत्रों में 200 मतदाताओं से बातचीत की जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि अभी भी ग्रामीण मतदाता जागरूक नहीं हैं और सत्ता की हस्तांतरण प्रक्रिया तथा ग्राम पंचायतों की संवैधानिक मान्यता और संविधान के नौंवे भाग में पंचायतों की संस्थापना मतदाताओं की दृष्टि में अभी भी महत्वपूर्ण नहीं है। मतदाताओं की सोच और व्यवहार से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार हैं :

मतदाताओं की जानकारी संबंधित मानसिक क्षितिज को मूल्यांकित करने के लिए उनसे यह जानना चाहा कि उनके जन्म के समय और वर्तमान में ग्राम की जनसंख्या कितनी है? ग्राम का क्षेत्रफल कितना है? किन पदों के लिए चुनाव हो रहे हैं। चुनाव कब, किस दिनांक को होंगे और वे कहां पर मतदान करेंगे। मतदान करने कैसे और किसके साथ जाएंगे? इन प्रश्नों पर मतदाताओं की जानकारी का प्रतिशत संतोषजनक नहीं रहा।

53 प्रतिशत मतदाताओं ने अपने ग्राम का क्षेत्रफल बताने का प्रयास किया और 63 प्रतिशत ग्राम की जनसंख्या को आकलित करके बताया। 83 प्रतिशत ने चारों में से मात्र तीन पदों के नाम बताए। मात्र 13 प्रतिशत ने मतदान का दिनांक और मतदान के स्थान का उल्लेख किया। मतदान करने के लिए मतदाताओं की स्वप्रेरणा नहीं रहती है क्योंकि 53 प्रतिशत ने तो स्पष्ट कहा कि गाड़ी लेने आएगी तो उसके साथ जाएंगे और 26 प्रतिशत ने बताया कि घर वाले जाएंगे तो वे भी मतदान करने जाएंगे। मात्र 20 प्रतिशत ने स्वयं की इच्छा से मतदान करने की बात कही। केवल 16 प्रतिशत ने यह बताया कि वर्तमान पंचायत और सरपंच को वे पंच परमेश्वर की संज्ञा दे सकते हैं। इस तरह मतदाताओं की सकारात्मकता का समग्र मूल्यांकन करें तो यह सूत्र ही प्रयोग में लेना होगा :

स्थान + दिनांक की जानकारी का प्रतिशत + स्वप्रेरणा से मतदान + पंचायत में विश्वास

इन चारों का योगफल करके 400 का भाग दिया जाए।

इस सूत्र से यही फलन आएगा :

$$\frac{13+13+20+16}{400} = \frac{62}{400}$$ अर्थात् 15.5 प्रतिशत

ग्रामीण मतदाताओं में से मात्र 15.5 प्रतिशत को जागरूक कह सकते हैं। अतः सामाजिक विज्ञान संस्थान नई दिल्ली के इस सिद्धान्त को स्वीकार करना होगा कि ग्रामीण भारत में जन चेतना जाग्रत करने का विराट अभियान चलाया जाए (पंचायतराज अपडेट 3(36) जनवरी 1999)। ऐसे विराट अभियान के सहारे ही ग्रामीण स्तर की धरातलीय प्रजातंत्रीय संस्थाओं को वास्तव में सत्ता सम्पन्न गणतंत्र बना सकते हैं। ❑

लड़की का पैदा होना

*बद्री प्रसाद वर्मा अनजान

लड़की का पैदा होना आज एक अभिशाप बन गया है।
आज घर में लड़की के पैदा होते ही मातम छा जाता है।
मां–बाप के चेहरे पर उदासी छा जाती है।
लड़की का पैदा होना मां–बाप एक बोझ समझ बैठते हैं।

लड़की पलती है, बढ़ती है, पढ़ती है मां बाप के घर में।
मगर जवान होते ही लड़की मां–बाप के सर का भारी बोझ बन जाती है।
लड़की की शादी दहेज देकर की जाती है।

लड़की शादी के बाद जब बहू बन कर ससुराल जाती है तब भी चैन नहीं पाती है।
क्योंकि दहेज के कारण लड़की को जला कर मार दिया जाता है।
लड़की जन्म से मौत तक जुर्म सहने की आदी बन जाती है।

ग्राम सभा की एक बैठक

ग्राम पंचायत सामोद
(पंचायत समिति गोविन्दगढ़, जिला जयपुर)
15 मई 2000

जगदीश प्रसाद गूर्जर

इस लेख में लेखक ने ग्राम सभा की एक ऐसी बैठक का सजीव वर्णन किया है जिसमें उसने भाग लिया। बैठक में पहली समस्या तो कोरम की रही जिसकी वजह से बैठक बड़ी देर से शुरू हुई। फिर बैठक में दलगत राजनीति की झलक दिखाई दी जिसके कारण हर नए प्रस्ताव को लेकर खींचतान रही और आम लोगों की तो बात क्या जन प्रतिनिधियों में उत्साह का अभाव साफ दिखाई दिया है। लेखक ने इस स्थिति से उभरने के लिए कुछ उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किए हैं इस लेख में।

I

चौबीस अप्रैल 1993 से लागू 73वें संविधान संशोधन से पंचायतों को संवैधानिक दर्जा दिया गया और ग्राम सभा के माध्यम से जन सहभागिता बढ़ाने का मार्ग प्रशस्त किया गया। इस संविधान संशोधन का उद्देश्य पंचायती राज संस्थाओं को स्थानीय स्वायत्त शासन की ऐसी लोकतान्त्रिक संस्थाएं बनाना है, जो अपने सदस्यों को ग्राम सभा के माध्यम से स्वशासन का अवसर दे पाएं।

73वें संविधान संशोधन के बाद ग्राम सभा संविधान का अभिन्न अंग बन गई है। ग्राम पंचायत क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले सभी मतदाताओं की सामूहिक संस्था को ग्राम सभा कहा जाता है।

73वें संविधान संशोधन के तहत राजस्थान में पारित राजस्थान पंचायती राज अधिनियम 1994 में ग्राम स्तर पर ग्राम सभा और ग्राम पंचायत का गठन किया गया है। इस अधिनियम के तहत राजस्थान में ग्राम सभाओं का आयोजन साल में चार बार होता है।

प्रो. पी.सी. माथुर का *कुरुक्षेत्र* (अक्टूबर 1999) अंक में प्रकाशित *राजस्थान में ग्राम सभा : कल आज और कल* में ग्राम सभा की वस्तुस्थिति की जानकारी मिली। उन्होंने अपने अध्ययन में यह पाया कि 1994 से राज्य सरकार द्वारा ग्राम सभाओं में फिर से प्राण फूंकने का प्रयास जारी है, लेकिन लोगों में ग्राम सभा के प्रति दिलचस्पी का अभाव है तथा यह प्रभावी संस्था नहीं बन पाई है।

इस प्रकार ग्राम सभा में कई प्रकार की कमियों को देखते हुए राजस्थान के पंचायत राज मंत्री प्रो. पी.सी. जोशी (जो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर भी हैं) ने ग्राम सभाओं में जन सहभागिता बढ़ाने तथा उनको सशक्त बनाने के लिए विधान सभा में कानून बना कर आमूलचूल परिवर्तन किए।

अब ग्राम सभाओं से पहले वार्ड सभाओं का आयोजन होता है, जिसमें वार्ड की समस्याओं के बारे में विचार–विमर्श होता है तथा वार्ड के विकास के लिए वार्ड सभा प्रस्ताव पास करती है और ग्राम सभा या वार्ड सभा का कोरम में कुल मतदाताओं का दशांश के साथ अनुसूचित जाति/जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग व महिलाओं का भी दशांश होना जरूरी है।

मैंने प्रो. पी.सी. माथुर और डा. लीला राम गुर्जर की प्रेरणा से वार्ड सभाओं और ग्राम सभा का अध्ययन करने के लिए जयपुर जिले की गोविन्दगढ़ पंचायत समिति के सामोद ग्राम पंचायत की ग्राम सभा का अध्ययन किया।

II

लेखक ग्राम पंचायत सामोद की ग्राम सभा की कार्यवाही का अध्ययन करने सामोद प्रातः 10 बजे पहुंचा। वहां पहले से ही मौजूद सचिव महोदय ने बताया कि ग्राम सभा की मीटिंग 11 बजे शुरू होगी। थोड़ी देर बाद ही ग्राम पंचायत सामोद की सरपंच श्रीमती शशि मिश्रा पंचायत भवन में आईं। लेखक ने सरपंच महोदया से ग्राम सभा के एजेण्डा के बारे में जानकारी ली, जो इस प्रकार थी :

- गत वर्ष के लेख के विवरण की समीक्षा।
- चालू वित्तीय वर्ष हेतु प्रस्तावित विकास और अन्य कार्यक्रमों के प्रस्ताव तैयार करना।
- गत आडिट रिपोर्ट और उसकी अनुपालना की समीक्षा करना।
- वार्ड सभाओं द्वारा लिए गए प्रस्तावों का अनुमोदन करना।
- सामाजिक क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं द्वारा किए जा रहे कार्यों की समीक्षा करना।
- राशन की दुकानों के आवंटन पर चर्चा।
- ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत पटवारी, अध्यापक, ए.एन.एम., ग्रामसेवक, आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, कम्पाउण्डर आदि की अनुपस्थिति के मामलों में उन पर कार्यवाही करने के प्रस्ताव तैयार करना।

सामोद ग्राम सभा की बैठक

- राजस्व व अन्य विभागों द्वारा जारी नागरिक अधिकार–पत्र की जानकारी उपलब्ध कराना।
- गरीबी उन्मूलन व अन्य कार्यक्रमों के अन्तर्गत विभिन्न वार्ड सभाओं द्वारा चयनित व्यक्तियों में से लाभार्थियों का वरीयता के अनुसार चयन।
- सम्बन्धित वार्ड सभा से यह प्रमाण–पत्र प्राप्त करना कि पंचायत की विभिन्न योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं के लिए उपलब्ध कराई गई निधियों का सही ढंग से उपयोग कर लिया गया है।

इन बैठकों में उपरोक्त विषयों के अतिरिक्त शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न पाठशालाओं/शिक्षा केन्द्रों के संचालन की समीक्षा की गई और राजीव गांधी स्वर्ण जयन्ती पाठशालाओं का आकलन और उनमें तथा ग्राम पंचायत में स्थित एक उच्च प्राथमिक विद्यालय हेतु महिला शिक्षा सहयोगी का चयन, भवन रहित विद्यालयों हेतु राहत कार्यों को विभिन्न विकास योजनाओं के साथ जोड़ कर शाला का निर्माण करना आदि पर चर्चा करना शामिल था।

III

11 बजे के बाद लोगों का ग्राम सभा में आने का सिलसिला शुरू हुआ। ग्राम सभा की मीटिंग शुरू होने से पहले ही कोरम पूरा करने के लिए हस्ताक्षर कराना शुरू कर दिया गया। 11.15 बजे चार महिलाएं आईं, उन्होंने आते ही हस्ताक्षर किए और दो वापिस चली गईं। उसी समय उपसरपंच महोदय श्री भगवान सहाय सैनी भी आये। उन्होंने सरपंच के साथ मिलकर ग्राम सभा की मीटिंग के बारे में विचार–विमर्श किया। सरपंच श्रीमती शशि मिश्रा (जो एक शिक्षित महिला हैं) पंचायत की विभिन्न प्रकार की समस्याओं के बारे में सचिव से जानकारी प्राप्त कर रही थीं। सरपंच महोदया ने कहा कि जब तक कोरम पूरा नहीं होगा, तब तक ग्राम सभा की कार्यवाही आरम्भ नहीं होगी।

वार्ड पंच मुरलीधर नायक कोरम पूरा कराने के लिए लोगों से हस्ताक्षर करवा रहे थे। महिलाएं भी हस्ताक्षर करके जा रही थीं। महिलाओं का कोरम पूरा करने के लिए घर–घर जा कर उन्हें ला रहे थे, लेकिन महिलाएं हस्ताक्षर करके ग्राम सभा में रुकी नहीं, वापिस घर जा रही थीं।

कोरम पूरा करने के लिए पूरी कोशिश की जा रही थी। 1.30 बजे तक भी कोरम पूरा नहीं हुआ। कोरम पूरा करने के लिए कई फर्जी हस्ताक्षर हो रहे थे। चौमू तहसील के तहसीलदार पंचायत समिति के सचिव भी 1.15 बजे आए और 1.30 बजे वापिस चले गए। तब तक भी सरपंच प्रस्तावित ग्राम सभा स्थल पर नहीं आईं। पंचायत भवन के अंदर ही मंत्रणा चलती रही। मीटिंग काफी लेट हो चुकी थी, इसलिए अधिकांश लोग सभा स्थल पर ही आराम करने लग गए। किसी भी तरह कोरम पूरा करके ग्राम सभा की कार्यवाही 2.00 बजे शुरू हुई।

IV

ग्राम सभा की अध्यक्षा श्रीमती शशि मिश्रा ने ग्राम सभा का एजेण्डा पढ़कर सबको सुनाया।

ग्राम पंचायत के सचिव महोदय ने ग्राम पंचायत का आय–व्यय का ब्यौरा प्रस्तुत किया।

इसके साथ ही सचिव ने 2 अक्टूबर 1999 की ग्राम सभा में हुए निर्णय को पढ़कर सुनाया तथा पंचायत की सभी वार्ड सभाओं में जो प्रस्ताव पास हुए, उनको पढ़कर सुनाया।

1 से 15 वार्ड तक वार्ड सभाओं में जो प्रस्ताव आए, उनको लेकर ग्राम सभा के सदस्य एक दूसरे पर पक्षपात का आरोप–प्रत्यारोप लगाने लगे। इन लोगों ने विचार व्यक्त किया कि वार्ड सभा में जो निर्णय लिए गए थे, वे पक्षपातपूर्ण थे। अन्त में ग्राम सभा ने वार्ड सभाओं में जितने भी निर्णय आए, उन सभी को सर्वसम्मति से पास कर दिया।

ग्राम सभा में राशन की दुकानों के आवंटन पर चर्चा हुई। ग्राम सभा पंचायत में तीन दुकानों के आवंटन का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास किया।

वार्ड सभाओं की समस्याओं को लेकर ग्राम सभा के सदस्यों में झगड़ा शुरू हो गया। हंगामा बढ़ते देख लोग ग्राम स्थल से घर जाने लगे। सरपंच, उपसरपंच आदि के हस्तक्षेप से मामला शान्त हुआ।

गरीबी रेखा में चयनित व्यक्ति जिनको इन्दिरा आवास योजना के तहत मकान बनाने की योजना के लिए कुल 15 वार्डों से 11 व्यक्तियों के नाम आए तथा बैंक से ऋण लेने के लिए 23 चयनित व्यक्तियों के नाम आए। इन दोनों प्रस्तावों को ग्राम सभा ने सर्वसम्मति से पास कर दिया।

ग्राम सभा ने निर्णय लिया कि चौमू सामोद रोड पूरी की जाए और राजोला तालाब का निर्माण कराया जाए।

ग्राम सभा में चार वार्डों से राजीव गांधी स्वर्ण जयन्ती पाठशाला के प्रस्ताव आए तथा उनमें पैरा टीचर के लिए 13 प्रस्ताव आए।

लेकिन ग्राम सभा में न तो कोई स्वर्ण जयन्ती पाठशाला खोलने का सर्वसम्मति से प्रस्ताव पास हुआ और न ही पैरा टीचरों के बारे में निर्णय हुआ। इनके निर्णय के बारे में समिति पर छोड़ दिया गया।

V

ग्राम सभा के अध्ययन से निम्न तथ्य सामने आए :

कोरम की स्थिति : ग्राम सभा में निर्धारित कोरम के लिए 443 व्यक्तियों की जरूरत थी लेकिन जब ग्राम सभा की कार्यवाही शुरू हुई तब मीटिंग में करीब 240 लोग ही उपस्थित थे। कोरम को देखकर ऐसा लग रहा था कि गांधी जी ने जिस ग्राम स्वराज के बारे में कहा था उसके प्रति लोगों में 21वीं शताब्दी आने तक रुचि नहीं बची है, न ही लोगों में पंचायत राज के प्रति जागरूकता है।

महिलाओं की ग्राम सभा में सहभागिता : ग्राम सभा की कार्यवाही में महिलाओं की कोरम के लिए 48 महिलाओं की उपस्थिति अनिवार्य होनी चाहिए थी, लेकिन जब मीटिंग शुरू हुई, तब नौ महिलाएं ही ग्राम सभा की मीटिंग में उपस्थित थीं, जिनमें से सात महिलाओं ने घूंघट निकाल रखा था। किसी भी महिला ने ग्राम सभा की कार्यवाही में नहीं बोला और एक घण्टे बाद सभी महिलाएं उठ कर जा चुकी थीं, सिर्फ एक महिला ही ग्राम सभा समाप्त होने तक रही, वो वार्ड नम्बर नौ से वार्ड पंच श्रीमती शान्ति देवी बुनकर थीं। सरपंच जो महिला थी, उसने भी ग्राम सभा में ज्यादा रुचि नहीं दिखाई।

ग्राम सभा की कार्यवाही में महिलाओं की कोरम के लिए 48 महिलाओं की उपस्थिति अनिवार्य होनी चाहिए थी, लेकिन जब मीटिंग शुरू हुई, तब नौ महिलाएं ही ग्राम सभा की मीटिंग में उपस्थित थीं, जिनमें से सात महिलाओं ने घूंघट निकाल रखा था।

ग्राम सभा में दलीय राजनीति : सामोद ग्राम सभा की कार्यवाही देखने के बाद पाया कि वहां ग्राम सभा के सदस्य दो खेमों में बंटे हुए थे। ग्राम सभा में जिस भी समस्या पर विचार विमर्श होता, खींचतान शुरू हो जाती। अधिकांश निर्णय सर्वसम्मति से पास नहीं हो पाए। पंचायत के निचले स्तर पर राजनीति नहीं होनी चाहिए क्योंकि गांव खेमों में बंट जाता है और गांव का विकास नहीं हो पाता।

जनप्रतिनिधियों की सहभागिता : सामोद ग्राम पंचायत में 15 वार्ड पंच हैं, जिनमें एक वार्ड पंच श्री भगवान सहाय सैनी, जो उपसरपंच भी हैं, को छोड़कर किसी ने भी ग्राम सभा में अपने विचार प्रकट नहीं किए। इन प्रतिनिधियों की स्थिति को देखकर लगता है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों का भी ग्राम सभा के प्रति उत्साह पर्याप्त नहीं है।

सारांश

प्रो. पी.सी. माथुर द्वारा राजस्थान में ग्राम सभाओं का किया गया अध्ययन और मेरे द्वारा ग्राम सभा व वार्ड सभाओं में किए गए शोध कार्य के फलस्वरूप यह पाया गया कि ग्राम सभाएं संगठनात्मक रूप से तो सफल हो पाई हैं, लेकिन व्यवहार में ग्राम सभाएं असफल सिद्ध हो रही हैं।

अधिकतर ग्रामीण लोगों को यही मालूम नहीं होता कि ग्राम सभाएं होती क्या हैं? न ही ग्राम सभाओं में कोरम की स्थिति संतोषजनक है। अधिकतर ग्राम सभाओं के आयोजन में कोरम पूरा करने के लिए औपचारिकता पूरी की जाती है।

ग्राम सभाओं में महिलाओं की भागीदारी भी नगण्य ही रहती है। जो महिलाएं ग्राम सभाओं में जाती हैं, वे सिफ़ मूकदर्शक बनकर ही रह जाती हैं। अतः ग्राम सभा में महिलाओं की सहभागिता के लिए व्यापक प्रचार–प्रसार और शिक्षा–क्षेत्र में क्रान्ति उत्पन्न करनी होगी। साथ ही साथ ग्राम सभा को सफल बनाने के लिए पंचायत जन प्रतिनिधियों में भी इसके प्रति जागरूकता उत्पन्न करनी होगी ताकि जन प्रतिनिधि ग्राम सभा की बैठक में विशेष रुचि ले सके। सरकार व बुद्धिजीवी वर्ग का दायित्व है कि ग्राम सभा के बारे में लोगों में जागरूकता उत्पन्न करें। ❑

शिक्षा से ही संभव है ग्रामीण महिलाओं का विकास

डा. कृष्ण कुमार सिंह

बेटा पैदा होने पर वाह! और बेटी होने पर आह! यह कराह दिन–ब–दिन तेज होती जा रही है। इतना ही नहीं जैसे–जैसे आधुनिकता की हवा बहती गई, लिंग के आधार पर इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाने लगा तथा भ्रूण परीक्षण कराकर बड़े पैमाने पर इनकी हत्या की जाने लगी। यह घिनौना रूप अब गांवों में भी देखने को मिल रहा है। ग्रामीण महिलाएं बेबस हैं।

आखिर कब तक ये ग्रामीण महिलाएं अबला कही जाती रहेंगी? कब तक इस अविरल धारा का शोषण होता रहेगा? क्या ग्रामीण महिलाएं शहरी महिलाओं के समान या फिर पुरुषों के समान कार्य नहीं कर सकतीं? क्या उनमें वह शक्ति, साहस और कार्य करने की क्षमता नहीं कि पुरुषों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर चल सकें?

एक अनुमान के अनुसार प्रति वर्ष 1.20 करोड़ बालिकाओं का जन्म होता है, जिनमें से लगभग तीन लाख की मृत्यु हो जाती है। जीवित बालिकाओं में से 15 वर्ष की आयु तक आते–आते कुपोषण, स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव, पौष्टिक आहार तथा समुचित देख–रेख की कमी के चलते 25 प्रतिशत बालिकाओं की मृत्यु हो जाती है।

यद्यपि ग्रामीण महिलाओं में धैर्य, साहस, उत्साह की कमी नहीं, बल्कि वे सब शक्तियां विद्यमान हैं जो पुरुषों में हैं, फिर भी पुरुषों की रूढ़िवादी मानसिकता के कारण ही ग्रामीण महिलाएं सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से उपेक्षित रही हैं। हालाकि भारतीय संविधान में महिलाओं को पुरुषों की भांति ही समान अधिकार प्रदान किए गए हैं और आज महिलाएं कुछ क्षेत्रों में पुरुषों के साथ आगे बढ़ रही हैं। लेकिन बलात्कार, छेड़खानी, अपहरण तथा महिलाओं के साथ हो रहे दुर्व्यवहार में भी बढ़ोतरी हो रही है। परिणामतः 1990 में सरकार ने राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया। महिला–जागृति सिर्फ शहरी क्षेत्रों में ही देखने को मिलती है। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की दशा में कोई सुधार नहीं हुआ। यदि यों कहा जाए कि 21वीं शताब्दी के प्रवेश–द्वार पर भी ग्रामीण महिलाओं की स्थिति ज्यों की त्यों बनी हुई है, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। गांवों की दयनीय स्थिति के लिए नारी–शिक्षा का घोर अभाव ही प्रमुख कारण है। गांव की पहली कक्षा में पढ़ने वाली 100 बालिकाएं पांचवीं कक्षा में पहुंचते–पहुंचते मात्र 40 रह जाती हैं। आठवीं कक्षा तक 18, दसवीं कक्षा तक 8 और इण्टर में जाते–जाते इनकी संख्या एक रह जाती है। इस तरह महिलाओं में उच्च शिक्षा का प्रतिशत शून्य के आस–पास रह जाता है।

गांव की पहली कक्षा में पढ़ने वाली 100 बालिकाएं पांचवीं कक्षा में पहुंचते–पहुंचते मात्र 40 रह जाती हैं। आठवीं कक्षा तक 18, दसवीं कक्षा तक 8 और इण्टर में जाते–जाते इनकी संख्या एक रह जाती है।

ग्रामीण महिलाओं की उपेक्षा और शोषण का एक मात्र कारण शिक्षा का अभाव माना जा सकता है। इसके अलावा सामाजिक कुरीतियों की व्यापकता, प्राचीन रूढ़िवादी परम्पराएं, सामाजिक पिछड़ेपन, पुरुषों की महिलाओं के प्रति रूढ़िवादी मानसिकता, पर्दा–प्रथा आदि ने भी इन्हें अपने अधिकार प्राप्त करने में असहाय बनाया है। यद्यपि केन्द्र और राज्य सरकारों ने ग्रामीण महिलाओं के कल्याणार्थ अनेक कार्यक्रम लागू किए हैं। समेकित बाल विकास परियोजना, महिला ग्रामीण विकास अभिकरण, आंगन बाड़ी, वात्सल्य योजना, आयुष्मति योजना, कल्पवृक्ष योजना, ग्राम्य योजना, सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना आदि के साथ–साथ प्रति 500 की आबादी पर एक महिला विकास केन्द्र बनाया गया है। सन् 2000–2001 के बजट में ग्रामीण विकास में महिलाओं की भागीदारी के लिए *महिला अधिकारिता कार्यदल* के गठन का प्रस्ताव किया गया है। परंतु ये कार्यक्रम शोषित, उपेक्षित ग्रामीण महिलाओं का भाग्योदय नहीं कर पा रहे हैं। नारी–अशिक्षा के कारण ये कार्यक्रम सरकारी खाना–पूर्ति तक ही सिमट

पढ़ी–लिखी न होने के कारण कड़ी मेहनत के बावजूद महिलाएं आज भी अबला

कर रह गए हैं। प्रायः ग्रामीण महिलाओं की समस्याएं विशेष प्रकृति की होती हैं, इसीलिए जब भी महिला विकास की चर्चा छिड़ती है विशेषकर ग्रामीण महिलाओं की तो कई जटिल प्रश्न उठ खडे होते हैं, क्योंकि ग्रामीण महिलाएं एक तरफ परम्परागत संस्कृति, अंध–विश्वास और रूढ़िवादिता से ग्रस्त होती हैं तो दूसरी तरफ अशिक्षा, अज्ञानता के चलते विकास कार्यक्रमों में इनकी भागीदारी नहीं बन पाती।

ग्रामीण परिवेश में प्रायः दो तरह की महिलाएं होती हैं – एक समाज के संभ्रात, सुसंस्कृत और उच्च कुलीन वर्गों की जो घर की चहारदीवारी तक ही सीमित रहती हैं। भोजन पकाना, स्वेटर बुनना, सिलाई, कशीदाकारी इत्यादि समस्त गृह कार्यों को कुशलतापूर्वक करना जानतीं हैं, पर इनका यह कार्य अपने परिवार के लोगों के लिए ही होता है। इन्हें आर्थिक दृष्टि से अनुत्पादक ही कहा जाता है।

इसके विपरीत निम्न और मध्यवर्गीय महिलाओं का सामाजिक स्तर अति निम्न पर स्वतंत्र और महत्वपूर्ण होता है। इन महिलाओं पर घर–बाहर के छोटे–छोटे सभी कार्यों का भार होता है। अभी सूर्य निकला नहीं, चिड़ियां चहकी नहीं कि ये चक्की चलाने, धान कूटने, जानवरों को चारा–पानी देने, दूध दुहने के साथ–साथ खेतों की जुताई, बुवाई, निकाई कटाई, खलिहानों में दवनी, ओसवनी, जलावन के लिए गोबर तथा लकड़ी चुनने, मवेशियों के लिए हरी घास लाने जैसे सभी कार्यों को बड़े ही परिश्रम तथा आत्म–विश्वास के साथ करने निकल पड़ती हैं। फलस्वरूप ये स्वावलम्बी तो होती हीं हैं, समाज के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका भी अदा करती हैं। फिर भी ये दीन–हीन और मलिन दिखाई पड़ती हैं, क्योंकि अशिक्षा तथा गरीबी के कारण अपने महत्व और अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं होतीं। परिणामतः इनका शोषण सदियों से होता चला आ रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य और कृषि संगठन ने बड़े अच्छे ढंग से कृषि क्षेत्र में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका को दर्शाया है। इस संगठन के एक प्रकाशन में कहा गया है कि समस्त विश्व में कुल मिलाकर जितने घंटे काम होता हैं उनमें से दो–तिहाई घंटे (अर्थात लगभग 66 प्रतिशत) काम केवल महिलाओं द्वारा किया जाता है। विश्व में कुल खाद्य का 50 प्रतिशत उत्पादन ग्रामीण महिलाएं करती हैं। ज्यादातर विकासशील देशों में ग्रामीण महिलाओं का जीवन कृषि उत्पाद की उपलब्धता पर निर्भर करता है। भारत की 81 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं कृषि क्षेत्र से ही अपनी रोजी–रोटी चलाती हैं। अतः समय की सबसे बड़ी मांग यही है कि कृषि में महिलाओं के योगदान को

(शेष पृष्ठ 19 पर)

कहानी

नदी की बहती धार

विमलेश गंगवार 'दिपि'

पर्वत–सा उत्तुंग बन्धा, इस पार सरकारी कोलोनी, उस पार बन्धे के नीचे बसी बस्ती। पौलिथीन, घासफूस, टाट–बोरों से बनी झोपड़ियां और उनके मध्य खड़ा पुरातन घना नीम का झबरीला पेड़। इस की टहनियों पर चिड़ियों की चहचहाहट, उनके पंखों की फड़फड़ाहट, और चोंच कटकटाने की आवाजें।

तपती जलती दुपहरियों में कालोनी के सम्भ्रान्त लोग जब ए.सी. और कूलरों की सरसराहट में आराम से दूरदर्शन देख रहे होते हैं तब बस्ती की महिलाएं नीम की शीतल छांह में बैठी बातें कर रही होती हैं। कोई आंचल से ढक कर अपने शिशु को दूध पिलाती है तो कोई खेलते और परस्पर अश्लील गालियों की बौछारें करते बच्चों को चुप कराती हैं। बड़ी बुढ़िया नीम के नीचे बैठ बहू–बेटियों की कुटेबों की चर्चा करती, लपलपाती लपट–सी बढ़ती महंगाई की बातें, फलाने की बहू के बच्चा होने की बात तो फलाने ..... की बेटी के बच्चा न होने की बात ..... और न जाने कितनी बातें करतीं।

बरसात क्या प्रलय आ जाती है। पानी भर जाने पर बस्ती के लोग सामान लेकर बन्धे के ऊपर भागते हैं। हर साल यही झमेला, यही मुसीबत.....।

वीरा का पति हरीराम रिक्शा लेकर आधी रात से गया है। रेल आती है उस वक्त सवारियां ज्यादा मिल जाती हैं। हरीराम कल ही बीमारी से उठा है, पर पेट की आग बुझाने को कुछ तो चाहिए ही। नदी की लपलपाती धार को देख वीरा घबरा रही है। एक ओर पति के वापस न आने की चिन्ता, दूसरी ओर नदी की उफनती धार की चिन्ता।

गीली साड़ी वीरा को अब लिजलिजी लगने लगी है। बरसात में कपड़े भला कहां सूखते हैं? नन्हे के सभी कपड़े गीले पड़े हैं। नन्हे की छाती ठंड से जकड़ गई है। खांसते–खांसते उसका बुरा हाल है। वीरा ने अपने रोते बच्चे को छाती से सटा लिया। यह बरसात भी गरीबों के लिए काल है काल.....।

बैनरों से ढकी गाड़ियां बन्धे पर आ खडी होती हैं। लोग भीड़ लगा कर खडे हो जाते हैं। वे लाउडस्पीकर पर चिल्लाते हैं – हम इन्सानी अन्तर को मिटाएंगे, बच्चों को निःशुल्क

शिक्षा और बीमारों का फ्री इलाज कराऐंगे, गरीबों के लिये पक्के घर बनवाएंगे, महिलाओं को सिलाई–बुनाई सिखाकर उन्हें आत्म–निर्भर बनाएंगे, बेरोजगारों और नवयुवकों को रोजगार दिलवाएंगे।

मोहन काका का झुरियों से भरा और सूखे नारियल–सा पिचके गालों वाला चेहरा खिल उठता है। वीरा, सोना, शान्ती, सरला, मुन्नी शिवरानी और बूढ़ी आजी सबकी आंखें चमकने लगती हैं।

कोलोनी बनेगी तो हर बरसात में बन्धे पर चढ़ने और उतरने से तो फुरसत मिलेगी। कितना कष्टदायी है गृहस्थी हटाना, बन्धे पर चढ़ाना..... और जब नदी घट जाए तो फिर पुराने ठिकाने पर लौटना।

मोहन काका बस्ती की बहू–बेटियों को कई–कई बार समझाते, देखो यह कागज, इसमें इसी ठिकाने पर मुहर लगानी है.....।

नन्हा जोर–जोर से रोने लगता है। वीरा ठंडी हथेली से उसकी दुखती पसली सहलाती है। अंधेरे में बैठी वीरा झोंपड़ी की ओर बढ़ती नदी की धार को देखती है। सन्नाटे और अंधेरे को चीरती हुई रेल पुल से निकल गई। रेल की सीटी उसके कानों को झनझना गई। हां पानी में झिलमिलाती ट्रेन की रोशनी उसे अच्छी लगी।

उमड़ती लहरें झोपड़ी की दीवारों से टकराने लगी थीं। लोग सामान सहित बन्धे पर आ रहे थे। बन्धे के उस पार सरकारी कालोनी की मल्टी स्टोरी इमारतों में विद्युत बल्ब जगमगा रहे थे। वीरा ने आज दीया भी नहीं जलाया है। जलाये भी तो कैसे? तेल कहां है दीये के लिए।

मोहन काका का बेटा वंशी रिक्शा लाता हुआ दिखाई दिया। वीरा का शक ठीक ही निकला। उसका पति हरीराम ही बैठा था रिक्शे पर, वीरा को देख वंशी बोला –

"भौजी बहुत तबियत खराब है हरी भैया की। ऐसे में रिक्शा लेकर क्यों गए थे घर से?"

"मैंने तो मना किया था, माने तब न?" कहकर वीरा ने पति के मुरझाए मुख और रूखी काया को देखा..... तो आंसू ढुलक आए उसकी आंखों से –

बन्धे पर बांस के खटोले पर हरीराम को उसने लिटा दिया। पड़ोसिन काकी चाय ले आई बनाकर..... अच्छा ही हुआ उसके घर में तो आज चीनी भी नहीं थी।

"हरीराम का घर बह गया, वह देखो बांस गया बहकर....." नीचे से आवाजें आ रही थी। वीरा ने पति को चाय का गिलास पकड़ा दिया –

पूरी गृहस्थी बह गई तो क्या होगा? पिछली वर्ष बाढ़ में बहा सामान तो अब तक खरीद नहीं पाई है..... वीरा.....।

बस्ती का युवक मुरली पलंग सिर पर रखे ऊपर दौड़ा आ रहा था। काकी कपड़ों की गठरी सिर पर रखे हाथ में बर्तनों से भरी बाल्टी लिये दौड़ी चली आ रही थी। बांस का टट्टर, पालिथीन के फटे अधकटे टुकड़े, अल्यूमीनियम की परात, नन्हे का टूटा खटोला लिए बस्ती के लोग बंधे पर चले आ रहे थे।

वीरा ने राहत की सांस ली। सबसे उसकी गृहस्थी को बहने से बचा लिया। अजी यह बड़े लोग झूठ क्यों बोलते हैं हर बार कालोनी बनवाने की बात करते हैं और.....।

बूढ़ी आजी को समझ में नहीं आ रहा था कि वीरा को क्या जवाब दे। "हमारी बस्ती बही जा रही है कौन आ रहा है हमारा हाल पूछने," वीरा फिर बोली।

"मैंने सिंह साहब के टी.वी. पर सुना है कि सरकार दवाइयां, खाने का सामान, माचिस, चीनी और दूध बंटवाएगी" मुरली बोला।

"टी.वी. पर सुना है तो बात सच होगी मुरली भैया! दूध बंट जाए तो मेरे नन्हे का पेट भर जायेगा....।" वीरा पूरी बात कह भी न पाई थी कि हरी राम क्रोध से चिल्लाया। "भिखारी है तू..... दूध मिलेगा तुझे! सुबह रिक्शा लेकर जाऊंगा, चार पैसे लाऊंगा, ऐसे ही थोड़े पड़ा रहूंगा खटोले पर.....। भगवान ने खाने के लिऐ मुंह एक और कमाने के लिए हाथ दो दिए हैं न.....! खबरदार इन बड़े लोगों की बातों का भरोसा किया तो। वोट की ऋतु निकल जाने पर सब भूल जाते हैं ये लोग.....।

वीरा अपने पति के दुर्बल तन में सबल मन को देख कर सिहर उठी। मोहन काका अवरुद्ध कंठ से बोले – 'बेटा हम गरीबों का धन हमारा यही मनोबल है। दुखों को झेलने की यही क्षमता हमारी शक्ति है। हमें मेहनत करना आता है हम किसी के मोहताज नहीं।"

अंधेरी रात में सांय–सांय करती पानी की आवाज और झींगुरों की आवाज बड़ी भयानक लग रही थी। कच्चे घर के पानी में गिरने की आवाज से सन्नाटा टूट गया।

नदी की तेज धारा ने वीरा के घर का मलबा अपने आगोश में ले लिया। काले गहरे पानी में दो–एक दीपकों की परछाई झिलमिला रही थी। नन्हा वीरा की छाती की गर्मी पा अब सो गया था। ❑

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, लघुकथा आदि रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजिए। पत्रिका में रंगीन फोटो छपते हैं। इसलिए रचनाओं के साथ हो सके तो रंगीन फोटो भी भेजिए। रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न होना चाहिए। जिन रचनाओं के साथ ऐसा प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा, उन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकेगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110001 के पते पर भेजें।

— **सम्पादक**

सहकारिता और ग्रामीण जन

प्रो. उमरावमल शाह*

भारत गांवों का देश है और उसकी लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है जिसमें से करीब 70 प्रतिशत जनसंख्या सीधी कृषि से जुड़ी हुई है। लगभग 76 प्रतिशत कृषि जोतों का सम्बन्ध लघु और सीमान्त कृषकों से है और लगभग 59 प्रतिशत काश्तरत कृषि जोतें 2.5 एकड़ से कम हैं। सिंचाई की पर्याप्त सुविधाओं के अभाव में अधिकांश किसान अपनी खेती के लिए मानसून पर आश्रित हैं। अथक प्रयासों तथा विनियोग के फलस्वरूप लगभग 30 प्रतिशत क्षेत्रफल ही सिंचाई सुविधाओं के अन्तर्गत आ पाया है। आम भारतीय किसान परंपरागत कृषक है और अनार्थिक कृषि जोतों से जुड़ा हुआ है। गरीब एवं साधनहीन होने से अधिकांश किसान कृषि को व्यवसाय के रूप में नहीं विकसित कर पा रहे हैं। अन्य रोजगार के अभाव में तथा कुटीर उद्योगों की दयनीय स्थिति के कारण कृषक तथा उसका परिवार कृषि पर ही आश्रित बन कर रह जाता है। ग्रामीण बढ़ती जनसंख्या का भार भी कृषि जोत पर ही पड़ता है और सीमित भूमि के कारण ग्रामीण परिवार सतत गरीबी के कुचक्र में आ जाता है। अतः कृषि क्षमता बढ़ाना, कृषि आधारित उद्योगों को विकसित करना और लघु एवं कुटीर उद्योगों को पुनर्जीवित करना ग्रामीण विकास का आधार होना चाहिए। ग्रामीणों के विकास को प्राथमिकता देनी होगी क्योंकि ग्रामवासियों की प्रगति से ही राष्ट्र की प्रगति आंकी जाएगी। इस दिशा में सहकारी

* पूर्व प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष सहकारिता, सहकारी कानून एवं सहकारी प्रशासन, वैकुण्ठ मेहता राष्ट्रीय सहकारी प्रबन्ध संस्थान, पुणे

आन्दोलन किसानों के आर्थिक विकास में सतत कार्यरत है।

ग्रामीणों का विकास

ग्रामीणों के विकास को हम यदि व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखें तो यह लाखों गांवों में रहने वाले करोड़ों व्यक्तियों के आर्थिक और सामाजिक विकास से सम्बन्धित सचेत तथा

ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत लगभग 95,000 प्राथमिक कृषि सहकारी साख समितियां तथा 75,000 प्राथमिक डेयरी समितियां भारत में हरित क्रांति और श्वेत क्रान्ति की जनक मानी जाती हैं।

योजनाबद्ध प्रयास की आवश्यकता को प्रतिपादित करता है। गांवों तथा ग्रामीणजनों के आर्थिक, सामाजिक तथा भौतिक विकास का आशय व्यापक रूप में ग्रामीणों के जीवन स्तर में परिवर्तन लाना है। परिवर्तन की इस प्रक्रिया से अधिकांश ग्रामवासियों के जीवन, कार्य तथा विकास के प्रति दृष्टिकोण बदलना होता है। ग्रामीणजनों की वर्तमान आश्रय की धारणा को बदलकर स्वयं पर आधारित रहने, गांव के उपलब्ध साधनों का ग्रामवासियों के हित में उपयोग करने तथा समुदाय की भावना को विकसित कर ही ग्रामीणों का विकास किया जा सकता है। विकास में जन भागीदारी की अपरिहार्यता को सभी स्वीकारते हैं। विकास थोपा नहीं जा सकता, लाभार्थियों को स्वयं भागीदारी निभानी होगी।

ग्रामीणजनों के विकास में सहकारिता का दर्शन

सहकारिता उन व्यक्तियों का संगठन है जो अपने आर्थिक हितों में वृद्धि करने के उद्देश्य से समानता के आधार पर, बिना किसी भेदभाव के ऐच्छिक रूप से संगठित होते हैं। भारत के सन्दर्भ में सहकारी आन्दोलन ग्रामीणों के आर्थिक और सामाजिक उत्थान में सबसे अधिक सहायक होने वाला साधन तथा संस्थागत प्रयास है। सहकारिता का आधार समानता, सामूहिक प्रयास, सामूहिक चेतना तथा एकता की भावना है। इसका मूल मंत्र है "संगठन के माध्यम से मनुष्य को अपने भाग्य का विधाता बनाना"। सहकारी समिति एक ऐसा संगठन है जो ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में ग्रामीणों की समस्याओं का समाधान सामूहिक और प्रभावशाली ढंग से करती है। ग्रामीणजनों के सन्दर्भ में सहकारिता का दर्शन "एक सबके लिए और सब एक के लिए" पर आधारित है। ग्रामवासियों को इस क्षमता का आभास कराना कि वे अपना विकास अपने द्वारा कर सकते हैं, सहकारिता की भूमिका और महत्ता को उभारता है।

सहकारिता की प्रासंगिकता

विकासशील राष्ट्रों में सहकारिता की प्रासंगिकता को अत्यधिक महत्व दिया जा रहा है क्योंकि लोकतांत्रिक प्रणाली में अधिकतम लोगों की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति परस्पर सहकार से अधिक प्रभावी ढंग से संभव है। हमारे देश में अभी तक किए गए ग्रामीणों के आर्थिक विकास के समस्त कार्यक्रमों से यह तथ्य उभर कर आया है कि ग्रामीणजनों के विकास के लिए संस्थागत प्रयासों की नितान्त आवश्यकता है तथा इसमें आपसी सहयोग और उनकी भागीदारी भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। यही एक ऐसा संगठन है जहां सब व्यक्ति बराबरी का अस्तित्व रखते हैं और जनतांत्रिक प्रणाली द्वारा अपने आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। "एक व्यक्ति एक मत" का आधार इसे पूंजी आधारित संगठन से ऊपर उठाकर एक मानवीय संवेदनशील संगठन का स्वरूप प्रदान करता है।

ग्रामीण समुदाय और सहकारी समितियों का गठन

ग्रामीण वर्ग चाहे कृषि उपज उत्पादन कार्य से सम्बन्धित हो, डेयरी उद्योग से जुड़े हों, लघु तथा ग्रामोद्योग या ग्रामीण दस्तकारी से जीविकोपार्जन कर रहे हों, खान मजदूर या वन श्रमिक के रूप में कार्य करते हों, इन सभी वर्गों ने अपने व्यवसाय को अधिक प्रभावी रूप से चलाने हेतु विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियां गठित कर, उनके सदस्य बनकर अपने आर्थिक विकास के कार्यक्रम का बीड़ा उठाया है। इसलिए आज हमें ग्रामीण क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियां कार्य करती हुई दिखाई देती हैं। उदाहरणार्थ ग्रामीण सहकारी साख समितियां, सहकारी डेयरी समितियां, सहकारी विपणन समितियां, सहकारी खादी ग्रामोद्योग और अन्य दस्तकारी समितियां,

अतः कृषि क्षमता बढ़ाना, कृषि आधारित उद्योगों को विकसित करना और लघु एवं कुटीर उद्योगों को पुनर्जीवित करना ग्रामीण विकास का आधार होना चाहिए।

सहकारी वन श्रमिक समितियां, सहकारी खनन उद्योग समितियां, सहकारी श्रमिक कामगार समितियां, आदि। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में अन्य आर्थिक क्रियाकलापों को लेकर वर्ग–विशेष से हटकर, सामान्य आर्थिक विकास हेतु भी विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियों की संरचना की गई है जिनसे समस्त ग्रामीण जन लाभान्वित हुए हैं। इन सहकारी समितियों में प्रमुख हैं सहकारी प्रक्रिया इकाइयां जैसे सहकारी शक्कर कारखाने, सहकारी चावल और दाल मिलें, सहकारी तेल मिलें, सहकारी सूत गिरणियां, सहकारी शीत गृह, सहकारी सिंचाई समितियां, सहकारी उपभोक्ता भण्डार आदि।

सहकारिता द्वारा अन्य संभावनाएं

ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर वर्ग, आर्थिक दृष्टि से पिछड़े लोग, अनुसूचित जन–जाति के लोग, ग्रामीण महिलाएं और युवा वर्ग के विकास के लिए सहकारी समितियां असीम संभावनाएं रखती हैं। ग्रामीण महिलाओं को ही लीजिए, वे 'स्वयं सहायता समूह' बनाकर अल्प बचतें विकसित कर सकती हैं तथा अपनी बचत के आधार पर आवश्यकतानुसार कर्ज लेने की पात्रता विकसित कर सकती हैं। ग्रामीण समुदाय के अन्य पिछड़े वर्ग सहकारिता के संस्थागत प्रयासों से आर्थिक उपक्रम के लिए अपने को सबल तथा सक्षम बना सकते हैं। इस दिशा में सहकारी प्रयास डेयरी उद्योग, भेड़ पालन, कुक्कुट पालन, सूअर पालन, मत्स्य

उद्योग, तेन्दूपत्ता संग्रहण आदि में काफी सहायक सिद्ध हो सकते हैं। उत्पादकता में वृद्धि, सूचना प्रौद्योगिकी का विकास और उपयोग सहकारिता के माध्यम से न केवल सुगम और प्रभावी है बल्कि वर्तमान ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में 'संभव' की 'असंभव' पर विजय स्वरूप है। राजस्थान का नायला ग्राम और उसमें कार्यरत महिला सहकारी डेयरी समिति आज भी अमरीका के राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के मानस–पटल पर अमिट छाप छोड़े हुए है जहां ग्रामीण महिलाओं ने डेयरी समिति पर कम्प्यूटर का प्रयोग कर सूचना प्रौद्योगिकी का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया है।

ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत लगभग 95,000 प्राथमिक कृषि सहकारी साख समितियां तथा 75,000 प्राथमिक डेयरी समितियां जहां एक ओर भारत में हरित क्रांति और श्वेत क्रान्ति की जनक मानी जाती हैं, वहीं अब विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियां ग्रामीण समुदाय के सभी वर्गों को लाभान्वित करने का सशक्त माध्यम बनकर उभरी हैं। आज देश के शत–प्रतिशत गांवों में सहकारिता ने पहुंच बना ली है। ग्रामीण समुदाय के 65 प्रतिशत परिवार प्राथमिक ग्रामीण समितियों से जुड़ चुके हैं और कृषि उत्पादन के लिए बड़ी मात्रा में नकदी ऋण, खाद, बीज और कीटनाशक दवाइयां प्राप्त कर रहे हैं।

ग्रामीणजन क्या करें?

बस आवश्यकता है तो इस बात की कि ग्रामीणजन सहकारिता के व्यापक स्वरूप और महत्व भूमिका को समझें और अपनी आर्थिक गतिविधि से संबंधित सहकारी समिति के सक्रिय सदस्य बनकर उससे अपना आर्थिक विकास करें। जब ग्राम्य अर्थव्यवस्था पूर्णतः सहकारिता पर आधारित हो जाएगी तो ग्रामीणजन न केवल शोषण से छुटकारा पा सकेंगे बल्कि गांवों में व्याप्त बेरोजगारी एवं आर्थिक पिछड़ेपन से मुक्त हो सकेंगे। ग्राम अर्थव्यवस्था और सामाजिक चेतना का आधार सहकारिता ही हो, ऐसा ग्रामीणों को समझना होगा और सहकारिता से संबद्ध व्यक्तियों को इस दिशा–बोध को व्यापक बनाना होगा। सहकारिता की सफलता में सहकारी शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसका अभाव ही विफलता को जन्म देता है। ग्रामीण परिवेश में इसकी नितान्त आवश्यकता है। ❑

(पृष्ठ 14 का शेष) **शिक्षा से ही संभव है.....**

पर्याप्त मान्यता दी जाए तथा उनकी शारीरिक अपेक्षाओं के अनुरूप आधुनिक कृषि उपकरणों तथा कृषि प्रौद्योगिकियों को ढाला जाए। इन अनुसंधानों का लाभ भी आसानी से महिला कृषि कामगारों तथा महिला कृषकों तक पहुंचाना होगा। पुरुषों की महिलाओं के प्रति मानसिकता में बदलाव लाना होगा। समाज की पढ़ी–लिखी महिलाओं को क्रान्तिकारी कदम उठाने होंगे तथा ग्रामीण क्षेत्र की अशिक्षित महिलाओं में आत्म–गौरव तथा आत्म–विश्वास पैदा करना होगा। जिस राज्य की महिलाएं शिक्षित हैं वहां परिवार नियोजन को अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। केरल की महिलाएं 86.17 प्रतिशत साक्षर हैं, उत्तर प्रदेश की 25.31 प्रतिशत। केरल में बच्चों के जन्म का औसत 2.6 प्रतिशत है वहीं उत्तर प्रदेश में 3.4 प्रतिशत है। इस अन्तराल का मतलब है कि केरल में शिशु के लालन–पालन पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यहां दो वर्ष की उम्र के 54.4 प्रतिशत शिशुओं को सभी रोग–निरोधक टीके लग चुके होते हैं जबकि उत्तर प्रदेश में टीकाकरण मात्र 18.8 प्रतिशत बच्चों का ही हो पाता है।

प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुष–प्रधान मानसिकता यह रही है कि महिला से नौकरी क्या करवानी है। इसे तो चूल्हा–चौकी करना ही पर्याप्त है। यदि ये लड़कियां उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेंगी तो इनकी शादी–ब्याह में अधिक रकम खर्च करनी पड़ेगी। लड़की से अधिक पढ़ा–लिखा वर खोजना पड़ेगा। ऐसा नहीं हुआ तो समाज क्या कहेगा! ऐसी मानसिकता इसलिए हो गई है कि हम आज शिक्षा को रोजगार से जोड़कर देखते हैं जबकि शिक्षा को समाजोत्थान, जनकल्याण तथा स्वरोजगार से सम्बद्ध करना ही समीचीन होगा।

73वें संविधान संशोधन के माध्यम से हमने महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण ग्राम पंचायत से लेकर जिला पंचायत तक सुनिश्चित तो कर दिया लेकिन ये अंगूठा छाप महिलाएं क्या सही निर्णय ले पाएंगी? क्या ये किसी सफेदपोश के हाथ की कठपुतली बनकर नहीं रह जाएंगी। इसी तरह संसद और विधान सभा में क्या 30 प्रतिशत आरक्षण में ग्रामीण महिलाएं भागीदार हो पाएंगी। यानी दुनिया में जो भी देश प्रगति के पथ पर बढ़ा है वह सिर्फ आरक्षण से नहीं बल्कि शिक्षा और जागरूकता के माध्यम से आगे बढ़ा है। नारी–शिक्षा के अभाव में ग्राम समृद्धि का सपना अधूरा ही रह जाएगा।

यदि एक लड़की शिक्षित होती है तो पूरा परिवार शिक्षित होगा, यदि एक लड़का शिक्षित होगा तो केवल एक व्यक्ति ही शिक्षित होगा। इस बात को ध्यान में रखकर महिला शिक्षण संस्थाओं को सुदूर गांव तक पहुंचाना होगा। महिला शिक्षा तथा सामाजिक जागरूकता के अभियान को तेज करना होगा। स्वयंसेवी संस्थाओं को ग्रामीण महिला विकास पर विशेष ध्यान देना चाहिए। केन्द्र तथा राज्य सरकार महिला श्रमिकों के कल्याण सम्बन्धी अधिनियमों का कड़ाई से पालन कराएं क्योंकि एक समाजशास्त्रीय अध्ययन से पता चलता है कि एक बालिका ससुराल जाने से पूर्व अपने परिवार को 60,000 रुपये के बराबर का लाभ पहुंचाती है। ऐसा गरीब परिवार में ही होता है। ऐसे में कोई गरीब अशिक्षित मां–बाप अपनी बच्ची को पढ़ाई में लगाए रखने की गलती क्यों करेगा? क्या ये घरेलू कामकाज करने वाली बच्चियां बाल मजदूरी की श्रेणी में नहीं आतीं? यदि आती हैं तो इन पर रोक लगाकर विद्यालय के आंगन में इन्हें पहुंचाना होगा।

ग्रामीण महिलाओं में प्रायः चेतना और नेतृत्व का घोर अभाव पाया जाता है, जिससे इनका शोषण बड़े पैमाने पर हो रहा है। अतः इनमें चेतना जगाकर अधिकारों से अवगत कराने की आवश्यकता है, क्योंकि यह समय की मांग है और इसी में समाज का कल्याण है, जो महिला शिक्षा के माध्यम से ही संभव है। ❑

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से ग्रामीण बैंकों की स्थापना 1975 में की गई। ग्रामीण क्षेत्रों में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के माध्यम से सामाजिक लक्ष्य प्राप्त करने में इन बैकों की भूमिका महत्वपूर्ण रही लेकिन ऋणों की वापसी न होने के कारण इनका घाटा बढ़ता गया। उदारीकरण का दौर शुरू होने पर इन्हें अब लाभप्रद व्यवसाय करने को कहा गया है और इस दिशा में इन बैंकों ने कुछ प्रगति भी की है। लेखक ने इस सब बैंकों का विलय कर एक नोडल बैंक बनाने का सुझाव दिया है ताकि ये ग्रामीण जनता को बेहतर सेवाएं उपलब्ध करा सकें।

भारत की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है। गांवों के विकास के बिना देश का विकास संभव नहीं है। ग्रामीणों की सबसे प्रमुख समस्या है ऋणग्रस्ता। ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय सुविधा न होने के कारण अधिकांश कृषक साहूकार और महाजन से ऋण लेने को मजबूर होते हैं जो ने केवल कृषकों का शोषण करते हैं अपितु पीढ़ी दर पीढ़ी उन्हें ऋणगस्त बनाए रखते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय सुविधा उपलब्ध कराने का कार्य सर्वप्रथम सहकारिता आन्दोलन को सौंपा गया था लेकिन ग्रामीण कृषकों तथा निर्धन वर्गों को इसका पर्याप्त लाभ न मिल सका।

विकास और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

डा. एस.के.वार्ष्णेय

इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सरकार ने जुलाई 1975 को वित्त विभाग के तत्कालीन महासचिव श्री एम. नरसिम्हन की अध्यक्षता में एक कमेटी गठित की। कमेटी ने 30 जुलाई 1975 को रिपोर्ट सरकार को सौंप दी। 26 सितम्बर 1975 को राष्ट्रपति ने अध्यादेश जारी कर ग्रामीण बैंक की स्थापना की घोषणा की तथा 2 अक्टूबर 1975 को गांधी जयन्ती के अवसर पर निम्न 5 ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई।

- मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश)
- गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)
- भिवानी (हरियाणा)
- जयपुर (राजस्थान)
- माल्दा (पश्चिम बंगाल)

स्थापना के समय प्रत्येक ग्रामीण बैंक की अधिकृत पूंजी एक करोड़ रुपये और चुकता पूंजी 25 लाख रुपये थी जो बाद में बढ़ाकर क्रमशः पांच करोड़ और एक करोड़ रुपये कर दी गई। इस पूंजी में केन्द्र सरकार द्वारा 50 प्रतिशत, राज्य सरकार द्वारा 15 प्रतिशत तथा लीड बैंक द्वारा 35 प्रतिशत का योगदान दिया जाता है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित करने का उद्देश्य

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विकास करना है। इन बैंकों का उद्देश्य छोटे और सीमान्त कृषकों, भूमिहीन श्रमिकों, लघु कारीगरों को ऋण तथा अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराना है जिससे न केवल कृषि का विकास हो अपितु उद्योग व्यापार और वाणिज्य का भी तीव्र गति से विकास हो सके। ये बैंक ग्रामीण बचतों को जमा करने और कृषकों को वित्तीय आवश्यकताओं के साथ अन्य सहायक बैंकिंग सेवाएं, गोदामों का निर्माण, कृषि साधनों की आपूर्ति, कृषि विपणन में सहायता और ग्रामीण क्षेत्रों के सम्पूर्ण विकास के अन्य कार्य भी करेंगे। ग्रामीण बैंकों द्वारा फसली ऋण, पशुपालन, गोबरगैस, सिंचाई साधनों हेतु ऋण, टेम्पो–रिक्शा आदि अनेक ऋण योजनाओं के अन्तर्गत समाज के कमजोर वर्गों को कर्ज दिया जाता है।

31 दिसम्बर 1975 तक बैंकों के विभिन्न खातों में 20 लाख रुपये जमा किए गए थे तथा 10 लाख रुपये के ऋण वितरित किए गए। वर्ष 1996–97 में समग्र जमा 18,032.01 करोड़ रुपये थी जो बढ़कर 1997–98 में 22,197.80 करोड़ रुपये हो गई जो 23 प्रतिशत वृद्धि प्रदर्शित करती है।

प्रगति

यद्यपि इन ग्रामीण बैंकों का कार्यक्षेत्र सीमित रहा है तब भी इन बैंकों ने अब तक ग्रामीण क्षेत्रों के कमजोर वर्गों को सहायता प्रदान करके अपने प्रमुख उद्देश्य को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है। हालांकि इन्हें प्रतिकूल भौगोलिक परिस्थितियों में कार्य करना पड़ता है। 1975 में जहां इन बैंकों की संख्या पांच थी, जून 1998 के अन्त में बढ़कर 196 हो गई तथा 14,420 शाखाएं देश के 23 राज्यों के 427 जिलों में कार्य कर रही थीं। केलकर समिति की सिफारिशों को ध्यान में रखकर सरकार ने अप्रैल 1997 के बाद कोई क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित नहीं किया है।

वर्ष 1997–98 के दौरान 23 राज्यों में कार्यरत 196 क्षेत्रीय बैंकों के निष्पादन में सुधार हुआ है। इस वर्ष के दौरान 126 ग्रामीण बैंकों में 302.1 करोड़ रुपये का लाभ अर्जित हुआ जबकि हानि प्रदर्शित करने वाले बैंकों की संख्या 152 से घटकर 70 रह गई। अधिकांश ग्रामीण बैंकों ने अपनी इक्विटी तथा कोष को समाप्त कर दिया है और अनेक बैंकों ने अपनी घाटे की स्थिति को ठीक करने के लिए अपनी जामाओं का उपयोग करना भी प्रारम्भ कर दिया है।

जमा और ऋण

ऋण देने में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का योगदान सराहनीय रहा है, साथ ही उनकी प्राप्त राशि में भी बढ़ोतरी हुई है। 31 दिसम्बर 1975 तक बैंकों के विभिन्न खातों में 20 लाख रुपये जमा किए गए थे तथा 10 लाख रुपये के ऋण वितरित किए गए। वर्ष 1996–97 में समग्र जमा 18,032.01 करोड़ रुपये थी जो बढ़कर 1997–98 में 22,197.80 करोड़ रुपये हो गई जो 23 प्रतिशत वृद्धि प्रदर्शित करती है। रिजर्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक समाज के कमजोर वर्गों को ऋण सुविधा उपलब्ध कराने में सफल हुए हैं किन्तु इन बैंकों द्वारा प्रदत्त कुल ऋणों की

(शेष पृष्ठ 44 पर)

* प्रवक्ता वाणिज्य, राजकीय महाविद्यालय, अतरौली (अलीगढ़)

ग्रामीण बैंक : विकास की रजत जयंती

सुजाता सुलखे

दो अक्तूबर 1975, गांधी जयंती के दिन अभ्युदित ग्रामीण बैंक गांधी जी के सपनों के भारत को विकास की डगर पर अग्रसर करने के लिए स्थापित किया गया। सहकारी बैंक और वाणिज्यिक बैंक ग्रामीण अर्थव्यवस्था की जरूरतों को पूरा करने में कई प्रकार से अक्षम थे। अतः इन दोनों तरह की ऋण एजेंसियों की कमियों को दूर कर सभी उपयोगी तथा अच्छी बातों को एकसूत्र में पिरोकर ग्रामीण बैंकों की परिकल्पना की गई। स्थानीयता की भावना, ग्रामीण क्षेत्र का पुट, ग्रामीण समस्याओं की जानकारी, स्वयं संसाधन जुटा सकने की क्षमता, प्रभावी प्रबंधन, केन्द्रीय मुद्रा बाजार में सीधी पहुंच इत्यादि विशेषताओं के साथ ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ करने का लक्ष्य ग्रामीण बैंकों के सम्मुख रखा गया।

केन्द्र सरकार, प्रायोजक बैंक और राज्य सरकार के संयुक्त स्वामित्व के अंतर्गत इन पर मुख्यतः केन्द्र सरकार नियंत्रण रखती है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (I.R.D.P.) द्वारा सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति करने में इन बैंकों ने 80 के दशक में अहम भूमिका निभाई है। इन लक्ष्यों की पूर्ति करने के अभियान में ग्रामीण बैंकों की स्वयं संसाधन जुटा सकने की क्षमता और लाभप्रदता बुरी तरह प्रभावित हुई।

स्थापना से लेकर 1990 तक ये बैंक मुख्यतः शासकीय ऋण योजनाओं को कार्यरूप में परिणित करते रहे। निक्षेप पर जोर न देने से साख उपलब्ध कराने के लिए बाहरी पुनर्वित पर निर्भर रहे। ऋणों की वापसी न होने से

इनके द्वारा वितरित अधिकांश ऋण अलाभप्रद हो गए जिससे संचित घाटा बढ़ता गया। श्रम खपाऊ सरकारी दायित्व निभाने के कारण इन बैंकों की मानवशक्ति अनार्जक कार्यों में खर्च हुई, जिससे व्यवसाय में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो पाई। नब्बे के दशक की शुरुआत में राष्ट्रीय पंचाट द्वारा 'समान काम के बदले समान वेतन' के निर्णय के साथ वेतन मद में खर्चे बढ़ गए। सरकार द्वारा आर्थिक सुधार हेतु कदम उठाने के कारण शासकीय योजनाओं में ऋण वितरण पर अंकुश लगा। बैंकों को समाजिक लक्ष्यों की पूर्ति के बजाय लाभप्रद व्यवसाय करने को कहा गया।

बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों की हवा सबसे अंत में ग्रामीण बैंकों तक पहुंची। परंतु परंपरागत तरीकों और प्रतिकूल परिस्थितियों में काम करते हुए भी ग्रामीण बैंक कर्मियों ने व्यवसाय में अच्छी प्रगति की। इनका निक्षेप मार्च 1992 की तुलना में मार्च 2000 में साढ़े पांच गुना होकर 32,153 करोड़ रुपये हो गया। उक्तावधि में गैर लक्ष्य समूह में ऋण वितरण की स्वतंत्रता से ऋण ब्याज आय 395 करोड़ से बढ़कर 1,137 करोड़ रुपये हो गई। ड्राफ्ट जारी करने और अन्य अनुषगी सेवाएं न दे पाने के बावजूद विविध आय और कमीशन 26 करोड से बढ़कर 157 करोड़ रुपये हो गया। लाभ अर्जन करने वाले ग्रामीण बैंकों की संख्या 1994 में 23 थी जो अब 164 तक पहुंच गई है। मार्च 2000 में इन बैंकों का लाभ 561 करोड़ रुपये रहा। ग्रामीण बैंकों के लिए व्यावहारिक नीतियां बनाने से इनके निष्पादन में लगातार सुधार हो रहा है। प्रति कर्मचारी/प्रतिशाखा उत्पादकता में वृद्धि हो रही है। संचित घाटे में 1998 से लगातार

कमी आ रही है। इससे जाहिर है कि सरकारी नीतियां ही इन बैंकों को कमजोर वित्तीय स्थिति के लिये जिम्मेदार रही हैं। भविष्य में इनका निष्पादन निश्चित रूप से सुधरेगा।

ग्रामीण साख बाजार की समस्याएं :

- कृषि क्षेत्र में पूंजी निर्माण में लगातार कमी आ रही है जिस पर नीति नियंताओं को तत्काल ध्यान देना होगा।

वित्तीय संस्थाओं की कागजी जटिलताओं के कारण लोगों के लिये ऋण लेना कठिन कार्य है। बेबाकी प्रमाण–पत्र लेने जैसी छोटी–सी औपचारिकता पूरी करने में ऋणी परेशान हो जाता है।

- ग्रामीण कृषि व्यवस्था का बड़ा वर्ग कृषि सुधार और यांत्रिकीकरण हेतु विकास ऋण से वंचित है।
- सरकार नियंत्रित वित्तीय संस्थाएं लाभप्रदता के चक्कर में सक्षम लोगों को ही ऋण देने लगी हैं जिससे ग्रामीण समाज के कुछ सक्षम लोग ही लाभान्वित हो रहे हैं। शेष वंचित हैं, जो कृषि उत्पादन में गिरावट का कारण बन सकता है और देश के सामने खाद्यान्न संकट, सामाजिक–आर्थिक विषमता, बेरोजगारी, असंतोष, असंतुलन तथा अवसाद को जन्म देगा।
- वित्तीय संस्थाओं की कागजी जटिलताओं के कारण लोगों के लिए ऋण लेना कठिन कार्य है। बेबाकी प्रमाण–पत्र लेने जैसी छोटी–सी औपचारिकता पूरी करने में ऋणी परेशान हो जाता है।
- आज भी ग्रामीणों के लिए अच्छी बैंकिंग सुविधाएं दुःस्वप्न ही हैं।

उपरोक्त समस्याएं और कमियां ग्रामीण बैंकों के माध्यम से ही दूर की जा सकती हैं, क्योंकि 23 राज्यों में करीब साढ़े चौदह हजार शाखाओं में 70 हजार कार्मिकों का जमा जमाया विशाल संगठन ही यह कार्य कर सकता है।

ग्रामीण मानव संसाधन विकास और समग्र ग्रामीण विकास के लिए ग्रामीण बैंकों की क्षमता का पूर्ण उपयोग निम्नानुसार हो सकता है।

ग्रामीण बैंकों को राष्ट्रीय स्वरूप देना :

वर्तमान में 196 ग्रामीण बैंकों का एकीकरण कर भारतीय ग्रामीण बैंक बनाया जाए या इन्हें नाबार्ड का सहायक बैंक बना दिया जाए। इससे संसाधनों का बेहतर उपयोग हो सकेगा तथा सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर इन बैंकों को अच्छी पहचान और स्वीकृति मिलेगी। बीते 25 वर्षों में अलग–अलग स्वरूप में अर्जित विविधता का एक मंच पर बेहतर उपयोग हो सकेगा। सबसे बड़ी बात ग्रामीण जनता को अच्छी सेवाएं मिलेंगी। बड़ा संजाल होने से दूरस्थ गांवों के लोग भी लाभान्वित होंगे। इससे ड्राफ्ट और यात्री चेक भी देश भर हेतु जारी किए जा सकेंगे। ग्रामीण परीक्षार्थियों को शहर की शाखाओं में ड्राफ्ट बनवाने हेतु दिन–दिन भर इंतजार नहीं करना पड़ेगा। जनता की तकलीफें कम होंगी, आखिर कल्याणकारी राज्य में सारी संस्थाएं जनता की सुविधा के लिए ही तो होती हैं।

पदोन्नति व स्थानांतरण के दौरान कर्मचारी/अधिकारी देशभर में कही भी पदस्थ हो सकेंगे जिससे राष्ट्रीय एकता और बंधुत्व को बल मिलेगा।

मानव संसाधन विकास पर समुचित ध्यान

- कर्मिकों को नई व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में प्रशिक्षित किया जाए। उन्हें उचित प्रबंधकीय प्रशिक्षण दिया जाए।
- लंबे समय से पदोन्नति न होने के कारण तत्काल व्यावहारिक और मान्य पदोन्नति नीति पर अमल किया जाए।
- समुचित स्थानांतरण नीति तत्काल लागू की जाए।
- राष्ट्रीय पंचाट के निर्णयानुसार बैंकिंग उद्योग में लागू छठे और सातवें वेतन समझौते लागू किए जाएं।
- शाखाओं का आधुनिकीकरण किया जाए, नई प्रौद्यागिकी का उपयोग हो।

व्यावसायिक गतिविधियां

- जमा स्वीकार करने और ऋण वितरण के साथ ही अनुषंगी बैंक सेवाएं तत्काल शुरू की जाएं। साख जमा अनुपात अनुकूल हो। रिटेल बैंकिंग के तहत अंशों, बांड पत्रों, परीक्षा फार्मों की बिक्री संबंधी कार्य, लाकर्स, सेफ डिपाजिट वाल्ट्स की सुविधा, डिमांड ड्राफ्ट, तार अंतरण (T.T.), डाक अंतरण (M.T.), यात्री चेक, उपहार चेक जैसी सेवाएं लागू की जाएं।
- ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए सरकार के एजेंट के रूप में सेवाएं ली जाएं। मुख्य शहरों में शाखाएं स्थापित कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था और मुख्य अर्थव्यवस्था के बीच बेहतर संबंध स्थापित किया जाए।
- कृषि व ग्रामीण उत्पादकों के आयात और निर्यात के लिये ऋण दिए जाएं।

वर्तमान में 196 ग्रामीण बैंकों का एकीकरण कर भारतीय ग्रामीण बैंक बनाया जाए या इन्हें नाबार्ड का सहायक बैंक बना दिया जाए। इससे संसाधनों का बेहतर उपयोग हो सकेगा तथा सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर इन बैंकों को अच्छी पहचान और स्वीकृति मिलेगी।

- संभावनाओं वाली जगहों पर मोबाईल शाखाएं, विस्तार पटल, सेटेलाईट शाखाएं खोली जाएं।
- ग्रामीण बैंकों की निधियां अन्य वित्तीय संस्थाओं में निवेश करने की बजाय ग्रामीण ढांचे की निर्माण करने वाली संस्थाओं में लगाई जाएं।
- ग्रामीण विकास के लिए आबंटित बजट राशि ग्रामीण बैंकों के माध्यम से लक्ष्य तक पहुंचे।

उपरोक्त कार्य ग्रामीण भारत की तस्वीर बदलने में मददगार होंगे। ❑

ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की शिक्षा की समस्या

डा. विनोद गुप्ता

इसमें कोई दो राय नहीं कि आजादी के बाद शिक्षा के सभी स्तरों पर लड़कियों की संख्या काफी बढ़ी है लेकिन आज भी निरक्षर बालिकाओं और महिलाओं का प्रतिशत काफी अधिक है। एक अध्ययन के अनुसार आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में 57 प्रतिशत महिलाएं निरक्षर हैं। इसका मुख्य कारण है हमारे परिवारों में लड़कियों की शिक्षा के प्रति उपेक्षा का भाव। लेखक ने इस बारे में सही कहा है कि दृष्टिकोण को बदले बगैर यानी देश की आधी आबादी को मुख्य धारा में शामिल किए बगैर देश का तेजी से विकास लगभग असम्भव है।

भारत गांवों का देश है और उसकी करीब तीन चौथाई आबादी आज भी गांवों में बसी है। आजादी के बाद यद्यपि गांवों में ज्ञान का प्रकाश फैला है, लेकिन उसका लाभ पुरुषों को ही अधिक मिला है। ग्रामीण बालिकाएं और महिलाएं तो आज भी इससे वंचित हैं। आवश्यकता है हमारे दृष्टिकोण में बदलाव की, जिससे ग्रामीण बालिकाएं भी शहरी लड़कियों की भांति पढ़–लिखकर अपने पैरों पर खड़ी हो सकें।

आज समूच जी से प्रगति के नए आयामों की तरफ अग्रसर हो रहा है, वहीं ग्रामीण क्षेत्र की अधिकांश लड़कियां आज भी उपेक्षामय वातावरण में जी रही हैं। माता–पिता घर में ही अपनी लड़कियों की चपलता देखकर भले ही प्रसन्न हो जाते हों, लेकिन सच तो यह है कि ये लड़कियां बाहरी दुनिया से बिलकुल बेखबर रहकर कूप मंडूक बनी रहती हैं। घर की चहारदीवारी के बाहर उनकी सोच–समझ नहीं होती। जब उन्हें घर से बाहर कदम रखना पड़ता है, तो वे पूर्णतः दब्बू नजर आती हैं और तब उन्हें ऐसा लगता है कि काश, यदि वे भी पढ़–लिख जातीं और कुछ व्यावहारिकता सीखतीं, तो उन्हें हीन– भावना का शिकार न होना पड़ता।

एक समय था जब लड़कियों का कार्यक्षेत्र घर की चहारदीवारी तक सीमित था और चौके चूल्हे तक ही उनकी दुनिया सीमित थी, लेकिन आज जबकि हम 21वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं, ग्रामीण बालाओं को दुनियादारी से परिचित कराना ही होगा, तभी उन्हें राष्ट्रीय मुख्यधारा से जोड़ा जा सकेगा।

ग्रामीण परिवेश शहरों से सर्वथा भिन्न होता है। खेत–खलिहानों में महिलाएं, बच्चे कार्यरत रहते हैं। लड़कियां अपने माता–पिता के साथ खेती के काम करती हैं। ऐसे में वे स्कूलों में प्रवेश नहीं ले पाती हैं और ले भी लेती हैं, तो

वह औपचारिक होता है, व्यवहार में उन्हें स्कूल जाने का समय नहीं मिलता।

गांव के लोग अपनी लड़की गांवों में ही देना चाहते हैं क्योंकि ग्रामीण परिवेश में पली, पढ़ी और बड़ी हुई लड़की को शहरी वातावरण रास नहीं आता है। ग्रामीण लड़के भी ज्यादा पढ़े–लिखे नहीं होते। ऐसे में लड़कियों को अधिक पढ़ा–लिखाकर उनके माता–पिता कोई खतरा मोल नहीं लेना चाहते क्योंकि ऐसा किया, तो उतना पढ़ा–लिखा लड़का मिलना मुश्किल होगा। और फिर ग्रामीणजन अपनी लड़की के हाथ पीले करने को महत्व देते हैं, उनकी पढ़ाई–लिखाई को नहीं। यह सोच बदलनी होगी।

कहने को तो ग्रामीण शिक्षा के प्रचार–प्रसार की ढेरों योजनाएं चल रही हैं तथा कागजों पर हमने साक्षरता की दर बढ़ा भी ली है, लेकिन क्या वास्तव में हम ग्रामीण बालाओं को पूर्ण साक्षर बना पाए हैं? आज भी अधिकांश ग्रामीण बालाएं और महिलाएं अंगूठाछाप हैं, सच तो यह है कि ग्रामीण अंचलों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार के जितने दावे किए जा रहे हैं, परिणाम उससे काफी कम प्राप्त हुए हैं। आज भी हम लक्ष्य से बहुत दूर हैं।

भारत में साक्षरता की दर 52.21 प्रतिशत है। इसमें पुरुषों की साक्षरता दर 64.13 प्रतिशत तथा महिलाओं की 39.29 प्रतिशत है। हालांकि आजादी के 50 सालों में महिला साक्षरता में उल्लेखनीय सुधार हुआ है तो भी सचाई यह है कि हम उन्हें केवल साक्षर बना पाए हैं, शिक्षित नहीं। केवल अक्षर–ज्ञान होने से पढ़ाई नहीं हो जाती। इस दृष्टि से देखा जाए, तो देश की अधिकांश लड़कियां प्राइमरी शिक्षा पूरी होने के बाद अपनी पढ़ाई छोड़ देती हैं।

माध्यमिक स्तर पर लड़कियां लड़कों से काफी पीछे हैं। आगे की पढ़ाई में तो वे और अधिक पिछड़ जाती हैं। शहरों में रहने वाली लड़कियां भले ही स्कूल और कालेजों में जाकर पढ़–लिख लेती हों, ग्रामीण बालिकाएं तो आज भी शिक्षा से वंचित है। माता–पिता, अशिक्षित होने के कारण अपने बच्चों, विशेषकर लड़कियों को, पढ़ाना जरूरी नहीं समझते। अधिकांश परिवारों में केवल लड़कों को ही पढ़ाई के अवसर दिए जाते हैं और लड़कियों को निरुत्साहित किया जाता है। हमारे समाज में स्त्री और पुरुष की शिक्षा के बारे में आज भी दोहरे मापदंड कायम हैं। लड़के को इसलिए पढ़ाया जाता है कि आगे चलकर वह परिवार का सहारा बनेगा और लड़की को इसलिए नहीं पढ़ाया जाता है कि उसे पढ़ा–लिखाकर क्या करना है? उसे तो शादी करके पराए घर जाना है। लेकिन हमें यह मनोवृत्ति छोड़नी होगी।

एक समिति के माध्यम से महिलाओं की शिक्षा के संबंध में जन–दृष्टिकोण का पता लगाने के लिए एक व्यापक सर्वेक्षण किया गया। इसके अनुसार केवल 17 प्रतिशत माता–पिता ही अपनी लड़कियों को शिक्षा दिए जाने के पक्ष में थे। अधिकांश अभिभावकों का मत था कि घर चलाने के लिए लड़की को ज्यादा पढ़ने की जरूरत ही क्या है। जीवन में लड़कियों का काम पहले ही निर्धारित हो जाता है। अच्छा खाना पकाना, सफाई और बच्चे पैदा करना ही उनकी भूमिका रह जाती है।

लड़कियों के पढ़ाई में पिछड़ने के अनेक कारण हैं, जिनमें सबसे प्रमुख कारण सामाजिक और पारिवारिक उपेक्षा है। लड़कियों को पढ़ने का समय भी नहीं मिल पाता है क्योंकि अपनी माताओं के घर से बाहर जाने पर उन्हें घर संभालना पड़ता है। अनेक गरीब परिवार की लड़कियों को पढ़ने–लिखने की उम्र में कुछ काम–काज करना पड़ता है। घर से नजदीक स्कूल न होना तथा आवागमन के साधनों और सुरक्षा का अभाव भी कुछ ऐसे कारण हैं, जिससे माता–पिता अपनी लड़कियों को घर के बाहर भेजना उचित नहीं समझते। लड़के तो अपने घर से दूर किसी स्कूल में जा सकते हैं, पर लड़कियों को पढ़ाने के लिए दूर के स्कूलों में भेजने पर विचार नहीं किया जाता। लड़कियों को लेकर माता–पिता सदैव भयभीत और चिंतित रहते हैं। स्कूल आने जाने का

स्कूल में लड़कियों के दाखिले का प्रतिशत लगातार बढ़ रहा है

मार्ग यदि सुनसान है, तो चिंता और बढ़ जाती है।

लड़कियों पर शुरू से ही घरेलू कार्यों का बोझ इस कदर रहता है कि यदि उनका स्कूलों में दाखिला कराया भी जाता है, तो वह एक औपचारिकता मात्र होता है क्योंकि वे यदा कदा ही स्कूल जा पाती हैं। अधिकांश समय उन्हें अपनी मां के कार्यों में हाथ बटाना होता है। पढ़ाई के लिए वांछित समय नहीं मिलने की वजह से यदि वे किसी साल अनुत्तीर्ण हो जाएं तो उनकी पढ़ाई छुड़ा दी जाती है। यदि लड़कियों को भी लड़कों के समान साधन सुविधाएं और पढ़ने का समय मिले तो वे दिखा सकती हैं कि वे लड़कों से किसी भी दृष्टि से पीछे नहीं हैं। लड़कियों की उपेक्षा इस कदर होती है कि जहां स्कूल जाने के लिए लड़के को बस्ता दे दिया जाता है, वहीं लड़कियों को घर के कामों में मदद करने तथा छोटे भाई–बहनों की देख–रेख के लिए घर पर ही रहना होता है। निर्धन माता–पिता चाहकर भी अपनी लड़की को अच्छी तालीम नहीं दिला पाते। उनके सीमित साधन लड़कों की पढ़ाई के लिए ही कम पड़ते हैं।

यदि घर में एक या दो संतानें हों, तो फिर भी लड़कियों के पढ़ने–लिखने की संभावना रहती है लेकिन जहां संतानें बेहिसाब हों, वहां लड़कियों की बात जाने दीजिए, सभी लड़के भी नहीं पढ़ पाते। माता–पिता संतान पैदा करते समय इस बात पर ध्यान नहीं देते कि जिसे वे जन्म दे रहे हैं, उसे पढ़ाने लिखाने के लिए उनके पास कोई व्यवस्था है भी या नहीं? माता–पिता की गलती का परिणाम बेचारी लड़कियों को भुगतना पड़ता है। बहुत से माता–पिता सहशिक्षा वाले स्कूलों–कालेजों में अपनी लड़कियों को भेजना पसंद नहीं करते। अलग से लड़कियों का स्कूल न होना भी लड़कियों के आगे पढ़ने के अवसर समाप्त कर देता है।

सामाजिक दबाव की वजह से कई जाति, समाजों में आज भी बाल–विवाह किए जाते हैं। वे बेटियों की शिक्षा की बजाय उनके ब्याह को अहमियत देते हैं। बाल–विवाह न भी हो, तब भी माता–पिता का अंतिम उद्देश्य लड़कियों की शादी करना ही होता है और जैसे ही कोई योग्य वर मिलता है, वे बीच में ही पढ़ाई छुड़ाकर उसके हाथ पीले कर देते हैं।

लड़कियों में प्रतिभा की कमी नहीं होती। आवश्यकता इस प्रतिभा को विकसित करने की है। अनेक राज्यों में तो लड़कियों की स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक निःशुल्क व्यवस्था है। इसके अलावा सरकार तथा अनेक सामाजिक संस्थाएं गरीब तथा मेधावी छात्र–छात्राओं को छात्रवृत्तियां भी प्रदान करती हैं ताकि वे सुचारू रूप से अध्ययन कर सकें।

अनेक गरीब परिवार की लड़कियों को पढ़ने–लिखने की उम्र में कुछ काम–काज करना पड़ता है। घर के नजदीक स्कूल न होना तथा आवागमन के साधनों और सुरक्षा का अभाव भी कुछ ऐसे कारण हैं, जिससे माता–पिता अपनी लड़कियों को घर से बाहर भेजना उचित नहीं समझते।

आज के प्रगतिशील युग में जबकि सीमित परिवार का महत्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, लड़के और लड़कियों में इस तरह के भेदभाव बरतना बेमानी है। लड़कियों को शिक्षित बनाने का मतलब है, परिवार और समाज को शिक्षित बनाना। भले ही आप उनसे नौकरी न कराएं, परंतु उन्हें पढ़ाने में क्या हर्ज है? वैसे भी एक लड़की को सुशिक्षित करके आप दो परिवारों में सुशिक्षा की व्यवस्था करते हैं।

उन्हें सह शिक्षा या कोएजुकेशन वाले कालेजों में दाखिला कराने में भी संकोच न करें ताकि जब वे कालेजों से पढ़–लिखकर बाहर निकलें तो पुरुषों के साथ काम करने में उन्हें किसी तरह की झिझक न हो।

वैसे भी यदि लड़की दब्बू हुई तो अपनी रक्षा भी स्वयं नहीं कर पाएगी। लेकिन यदि वह तेज–तर्रार है, दुनियादारी से वाकिफ है, तो उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। उसका आत्म–विश्वास ही इतना पुख्ता होगा कि वह मुसीबतों का सामना निडरता और बुद्धिमानी से कर सकेगी। किसी भी प्रतिकूल स्थिति में वह धैर्य खोकर हताश नहीं होगी।

कई माता–पिता अपनी लड़की को कहीं भी अकेली नहीं भेजते। यहां तक कि कालेज छोड़ने और लेने भी उनका भाई जाता है अथवा वे स्वयं आते हैं। उनकी सहेलियों के यहां उसे नहीं भेजते। इस तरह लड़की हमेशा के लिए ही मन में अपने लड़की होने का भय विकसित कर लेती हैं। नारी के गुणों में संकोच, लज्जा और झिझक का होना अच्छा माना जाता है, लेकिन उसके ये गुण उसके विकास में बाधक नहीं बनने चाहिए।

शिक्षित लड़कियों में आत्म विश्वास और स्वाभाविमान की प्रबल भावना रहती है। अनपढ़ और कम पढ़ी–लिखी लड़कियों की बुद्धि और सामान्य ज्ञान बहुत मंद और सीमित रह जाते हैं तथा वे कुंठाओं से ग्रसित हो जाती हैं। पढ़ी–लिखी लड़कियों के विचार विस्तृत और आधुनिक होते हैं। लड़कियों में प्रतिभा की कमी नहीं होती। आवश्यकता इस प्रतिभा को विकसित करने की है।

लड़कियों को इस बात की शिक्षा अवश्य देनी चाहिए कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। उसे दुनिया की ऊंच–नीच से अवगत भी कराएं। इसके बाद उसे विकास के समुचित अवसर दें। पढ़ने–लिखने के लिए घर से बाहर या अन्य शहरों में भेजना पड़े तो भी हिचकिचाएं नहीं, भेजें। अपनी बेटी पर विश्वास रखिए। शकाएं मत पालिए। यदि उसे कुछ करना ही होगा तो घर बैठे भी कर लेगी और नहीं करना होगा, तो घर से सैकड़ों मील दूर से भी अपना दामन साफ बचाकर ले आएगी। इसलिए निश्चिंत होकर उसे पढ़ने–लिखने अथवा नौकरी के लिए बाहर भेजें।

केवल लड़की को इसलिए आगे बढ़ने के लिए अवसर नहीं देना कि वह एक लड़की है, ठीक नहीं है। उसे आत्म–विश्वासी बनाएं। वह लड़कों से भी अच्छी सफलता प्राप्त कर सकती है। बेटी को किसी भी स्तर पर बेटे से छोटा या हीन न समझें। ❑

औद्योगिक विकास के साथ बाल श्रम की समस्या

देवेन्द्र के. पटेल

प्रत्येक बालक का यह अधिकार है कि राष्ट्र एवं समुदाय के पास उपलब्ध संसाधनों को वह प्राप्त करे। उसका विकास एक ऐसे वातावरण में हो कि वह स्वतंत्र और गरिमापूर्ण जीवन जी सके, जो उसे शिक्षा के अवसर प्रदान करे तथा एक पूर्ण नागरिक के रूप में वह स्वयं को विकसित कर सके। बाल श्रम एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है और करीब एक करोड़ साठ लाख बच्चे बाल श्रमिक हैं।

* परियोजना अधिकारी / प्राध्यापक, निरंतर शिक्षा एवम् विस्तार कार्य विभाग, दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत – 395 007 (गुजरात)

दुर्भाग्य से हमारे बच्चों की एक बहुत बड़ी संख्या मजदूरी करने को बाध्य है और वह भी जोखिमपूर्ण परिस्थितियों के अंतर्गत।

बाल श्रम क्या है?

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (1983) – "जो बच्चे अपने स्वास्थ्य तथा शरीरिक व मानसिक विकास को क्षति पहुंचाने वाली परिस्थितियों में कम मजदूरी पर लम्बे समय तक कार्य करने, कभी–कभी अपने परिवारों से बिछुड़ कर स्वयं के भविष्य का निर्माण करने वाली शिक्षा तथा प्रशिक्षण के अवसरों से पूर्णतया वंचित रहकर समय से पूर्व ही वयस्कों के समान जीवन बिताने को विवश हैं, उन्हें बाल श्रमिक कहा जा सकता है।"

भारत में बाल श्रमिक

भारत में बाल श्रमिकों की संख्या के बारे में अलग–अलग अनुमानों के अनुसार यह संख्या 1.1 करोड़ से 10 करोड़ के बीच है। कामकाजी लड़कियों का लगभग 52 प्रतिशत कृषि श्रमिक है। इस प्रकार कृषि क्षेत्र में महिला बाल श्रमिकों की संख्या पुरुष श्रमिकों से अधिक है। इसके परिणामस्वरूप गैर–कृषि

कार्यों में लड़कियों की उपस्थिति मात्र 12.61 प्रतिशत ही है। कुल मिलाकर यह स्थिति दर्शाती है कि लड़कियां कम मजदूरी वाले कामों में लड़कों की तुलना में अधिक हैं।

बाल श्रम के स्वरूप क्या है?

बच्चे हमारी कार्य व्यवस्था के तीनों क्षेत्रों कृषि क्षेत्र, औद्योगिक क्षेत्र और सेवा क्षेत्र में कार्यरत, हैं तथा इस सम्बन्ध में प्रत्येक क्षेत्र की अपनी अलग–अलग विशेषताएं हैं।

अदृश्य बाल श्रमिक : बच्चे असंगठित क्षेत्रों में कार्य करते हैं। ये क्षेत्र कानून की परिधि में नहीं आते हैं यद्यपि इनमें बच्चे कई बार अत्यधिक जोखिमपूर्ण परिस्थितियों में कार्य कर रहे होते हैं। देश के कुल बाल श्रमिकों की संख्या का बहुत बड़ा हिस्सा ऐसे क्षेत्रों में कार्यरत बच्चों का है।

प्रवासी बाल श्रमिक : बच्चे ग्रामीण से शहरी अथवा छोटे शहरों से बड़े शहरों की तरफ पलायन करते हैं। वे या तो बेहतर अवसरों की तलाश में अथवा पारिवारिक दासता से मुक्ति के प्रयास में ऐसा करते हैं।

बंधक बाल श्रमिक : माता–पिता/अभिभावकों द्वारा लिये गये ऋण अथवा भुगतान के एवज में बच्चों को गिरवी रख दिया जाता है। ऋणों पर ब्याज की दरें इतनी अधिक होती हैं कि शेष रही भुगतान की राशि प्रतिवर्ष बढ़ती जाती है। इस प्रकार भुगतान लगभग असंभव हो जाता है और तब माता–पिता अपने बच्चों को गिरवी रखने पर बाध्य हो जाते हैं।

फुटपाथ पर बच्चे : कामगार बच्चे जिन्होंने अपने परिवारों को गांव अथवा कस्बे में छोड़कर शहर की ओर पलायन कर लिया है। इनके पास रहने की जगह नहीं है और रात रेलवे स्टेशनों, बस अड्डों आदि पर व्यतीत करते हैं। ये अपनी दिन भर की सारी कमाई उसी दिन में खर्च कर डालते हैं।

परित्यक्त/अनाथ बच्चे : कामगार बच्चे जिनके परिवार नहीं हैं अथवा जिन्हें उनके परिवारों द्वारा त्याग दिया गया है। ये अपना जीवन बिना किसी सहारे के फुटपाथ पर बिताते हैं और इस प्रकार अपने वर्ग में से सबसे अधिक शोषित और प्रताड़ित होते हैं।

बाल श्रम क्यों?

बाल श्रम समस्या का कोई एक कारण नहीं है। यह संसाधनों के असमान वितरण के कारण उत्पन्न गरीबी के कुचक्र, बेरोजगारी, अल्प रोजगार तथा कम मजदूरी का परिणाम है, जो कि केन्द्रीकृत एवं असंतुलित अर्थव्यवस्था तथा कृषि की विपन्न प्रकृति के कारण उजागर होती है। विद्यालयों की कमी अथवा विद्यालयों तक पहुंच का अभाव, अप्रासंगिक पाठ्यक्रम तथा शिक्षा पर होने वाला व्यय आदि बच्चे को मजदूरी की तरफ धकेल देता है। भारत सरकार ने आरंभ में 12 विशिष्ट स्थानों पर राष्ट्रीय बाल श्रम परियोनाएं शुरू की थीं। इसके बाद इसमें कई और परियोजनाएं जोड़ी गई हैं। आज देश के बहुत से राज्यों में 76 बाल श्रम परियोजनाएं कार्य कर रही हैं। सन् 2000 तक जोखिमपूर्ण व्यवसायों तथा प्रक्रियाओं में कार्यरत लगभग 20 लाख बालकों को काम से मुक्त कराने की योजना है। इसके अतिरिक्त सरकार बाल श्रमिकों से सम्बन्धित श्रम कानून को बेहतर ढंग से लागू करने के लिए राज्यों के प्रवर्तन तंत्र को भी मजबूत बना रही है। यूनिसेफ की बाल पद्धति में जिम्मेदारी बाल श्रम के उन्मूलन की मूलभूत रणनीति के रूप में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देना और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्कूलों में बालकों के प्रवेश तथा उनकी शिक्षा जारी रखना सुनिश्चित करना है। बाल श्रमिकों का जोखिमपूर्ण उद्योगों में न लगाया जाना सुनिश्चित करना, कानूनों का पुनरीक्षण करना और प्रवर्तन के प्रति पक्ष समर्थन को बढ़ावा देना भी शामिल है। बाल श्रम कार्यक्रमों की अनुश्रवण (मोनीटर) प्रणाली को मजबूत बनाना और बाल श्रम के उन्मूलन के समर्थन के लिए समाज को आगे लाने में स्वैच्छिक संगठनों, संचार माध्यमों, उद्योगों तथा विधितंत्र के आपसी सहयोग को मजबूती प्रदान करना भी इस नीति के उद्देश्य हैं।

बाल श्रमिक के अधिकार

अनुच्छेद–24 : कारखानों आदि में बालकों के नियोजन पर प्रतिबंध : चौदह वर्ष से कम आयु के किसी भी बालक को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिए नहीं रखा जाएगा या किसी अन्य परिसंकटमय कार्य में नही लगाया जाएगा।

अनुच्छेद–39 (ड.) एवं (च) : राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्व : राज्य अपनी नीति को विशिष्टतया, इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से :

(ड.) पुरुषों और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों।

(च) बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाए।

अनुच्छेद–45 : बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रबंध : राज्य संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद–51 : अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की अभिवृद्धि : राज्य संगठित लोगों के एक दूसरे से व्यवहारों में अन्तर्राष्ट्रीय विधि और सुधि बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का प्रयास करेगा।

समस्या से निबटने हेतु कुछ सुझाव

- बाल श्रमिकों को रखने वाले परिवारों, औद्योगिक संस्थानों और व्यक्तियों को सामाजिक, आर्थिक, राजकीय तथा शैक्षणिक सुविधाओं से वंचित कर देना चाहिए। उन्हें भारतीय दंड संहिता, मानव अधिकार, बाल मजदूरी जैसे विविध कानूनों के अंतर्गत दंडित किया जाना चाहिए।
- बाल श्रमिकों के द्वारा किए गए उत्पादन को अवैध मानकर उसको खरीदना नहीं चाहिए।
- बाल श्रमिक क्यों बनते हैं? उसका कारण जानकर उसी कारण/समस्या का निवारण

(शेष पृष्ठ 41 पर)

विकास में वृद्धजनों की सहभागिता आवश्यक

इरा सिंह

स्वास्थ्य संबंधी बढ़ती सुविधाओं और स्वस्थ जीवन के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण अब मनुष्य की औसत आयु निरन्तर बढ़ने लगी है। इससे विश्वभर में प्रति माह साठ वर्ष से अधिक आयु के लगभग दस लाख व्यक्ति बढ़ रहे हैं और अनुमान है कि सन् 2025 तक वृद्ध व्यक्तियों की संख्या बढ़कर बच्चों से भी दोगुनी हो जाएगी। आज हमारे सामने विकास और उत्थान का जो रास्ता है उसे मूर्तरूप देने में वृद्धजनों का अमूल्य योगदान रहा है। अतः उनके प्रति कृतज्ञता के रूप में उनकी समस्याओं का निराकरण खोजना सरकार, समाज तथा परिवार तीनों की नैतिक जिम्मेदारी है।

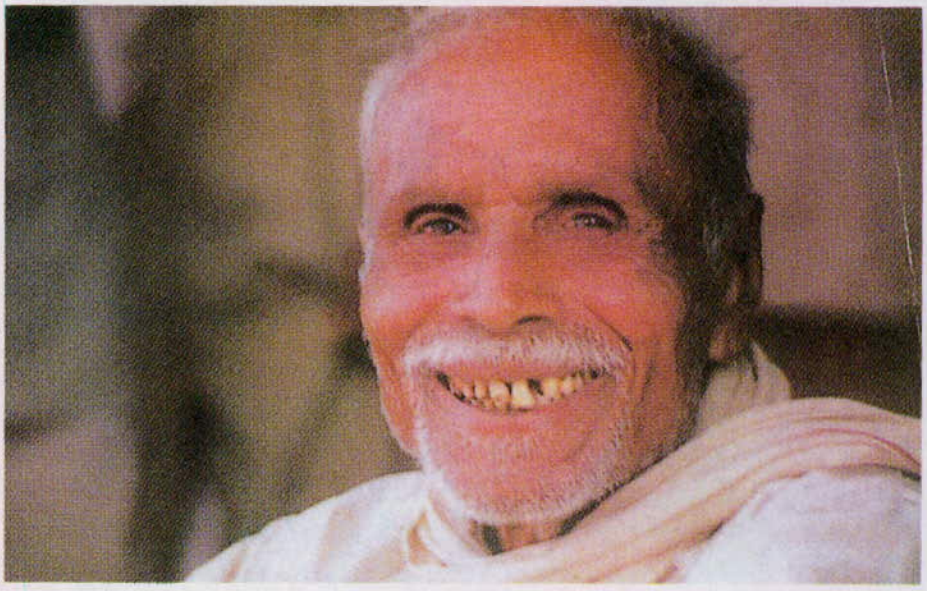

यह युग जिस गति से सामाजिक परिवर्तन को आत्मसात कर रहा है वैसा पहले देखने में नहीं आया। फलस्वरूप हम कई ऐसी समस्याओं से भी जूझ रहे हैं जिनके बारे में पहले सोचने की आवश्यकता महसूस नहीं हुई थी। वृद्धजनों की समस्या इनमें से एक है। मृत्यु–दर में कमी के कारण जीवन जीने की प्रत्याशा में वृद्धि हुई है। भारत ही नहीं सभी विकासशील देशों में वृद्धजनों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। 1901 में वृद्धजनों की कुल जनसंख्या 1 करोड़ 20 लाख थी जो 1991 में बढ़कर 5 करोड़ 53 लाख हो गई। सन् 2001 में इस जनसंख्या के 7 करोड़ 59 लाख हो जाने की उम्मीद है। स्वास्थ्य संबंधी बढ़ती सुविधाओं और स्वस्थ जीवन के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण अब मनुष्य की औसत आयु निरन्तर बढ़ने लगी है। इससे विश्वभर में प्रति माह साठ वर्ष से अधिक आयु के लगभग दस लाख व्यक्ति बढ़ते जा रहे हैं और अनुमान है कि सन् 2025 तक वृद्ध व्यक्तियों की संख्या बढ़ कर बच्चों से भी दोगुनी हो जाएगी।

वृद्धजनों को बढ़ती उम्र के साथ कई समस्याओं से दो–चार होना पड़ रहा है। औद्योगीकरण और बढ़ती जनसंख्या ने हमारे पुराने जीवन मूल्यों को गहरे तक प्रभावित किया है। परिणामस्वरूप परंपरागत सामाजिक संबंधों में तेजी से बदलाव आ रहा है। संयुक्त परिवार में विघटन और आर्थिक तथा सामाजिक स्वतंत्रता के चलते वृद्धजनों की देखभाल,

उनका भरण–पोषण एक समस्या हो गया है। विकासशील देशों में हालत और दयनीय है चूंकि यहां व्यक्ति परिवार से भावानात्मक तल पर गहरे जुड़ा हुआ है, वह अपने बच्चों के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकता। ऐसे में शारीरिक दुर्बलता, बीमारी या कष्टों को झेलने के साथ–साथ वह मानसिक विकार, असुरक्षा और निराशा से दिन काटने पर मजबूर है। समाज भी ऐसे लोगों को ज्यादा अहमियत देता नजर नहीं आता। ऐसे लोग या तो घरों में एक कोने में पड़े रहते हैं अथवा मंदिर या चौराहों पर झुंड में बैठे रहते हैं। वे स्वयं को अपने में समेटकर आत्म–केंन्द्रित हो जाते हैं और स्वयं को बेकार समझने लगते हैं। यहां यह कहना प्रासंगिक होगा कि गांव और कस्बों में भी वृद्धजनों को ऐसी ही समस्या का सामना करना पड़ता है। अपितु कहना होगा वे ज्यादा आश्रित और मजबूर नजर आते हैं। अप्रर्याप्त पौष्टिक आहार, अभावग्रस्त जीवन और पैसों के लिए संतान पर आश्रित बुजुर्ग अपना काफी समय दिशाहीनता में काट देते हैं क्योंकि गांवों में बच्चों की शादी जल्दी हो जाती है और कम उम्र में बेटे खेती और दूसरे कार्य संभाल लेते हैं। ऐसे में माता–पिता की वृद्धावस्था जल्दी मान ली जाती है और वे शीघ्र ही स्वयं को वृद्ध और बेकार समझने लगते हैं। वृद्धजनों की ऐसी ही कई समस्याओं की गंम्भीरता को समझते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 1999 को 'वृद्ध वर्ष' के रूप में मना कर दुनिया के देशों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया।

वृद्धजनों की भारी जनसंख्या को देखते हुए यह जरूरी है कि इनकी समस्याओं को समझकर उनके निराकरण की ओर कदम उठाए जाएं। इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि वृद्धजनों के पास अनुभव और ज्ञान का अपार भंडार है। यही वे व्यक्ति हैं जो पुरानी सभ्यता और ज्ञान को नई पीढ़ी को हस्तांतरित कर सकते हैं और नई पीढ़ी इनके अनुभवों का फायदा उठाकर लाभान्वित हो सकती है। परन्तु जरूरत है इस अपार जनसंख्या के मन में विश्वास जगाने की और उन्हें समाज और राष्ट्र के विकास की मुख्यधारा से जोड़ने की।

आज हमारे सामने विकास और उत्थान का जो रास्ता है उसे मूर्तरूप देने में वृद्धजनों का अमूल्य योगदान रहा है। अतः उनके प्रति कृतज्ञता के रूप में उनकी समस्याओं का निराकरण खोजना सरकार, समाज तथा परिवार तीनों की नैतिक जिम्मेदारी है। सिर्फ समस्याएं दूर करके उन्हें छोड़ना नहीं है उन्हें महत्वपूर्ण मानकर समाज के विकास में भागीदार बनाना भी आवश्यक है। वास्तव में यही तो वक्त है जब समाज इनकी भागीदारी से फायदा उठा सकता है क्योंकि व्यक्ति इस उम्र में पारिवारिक जिम्मेदारियां और नौकरी से मुक्त हो चुका होता है और सम्पूर्ण रूप से सामाजिक विकास में सहयोग और मार्ग–दर्शन दे सकता है। अनुभवी और ज्ञानवान व्यक्तियों का तिरस्कार करके कोई भी समाज प्रगति नहीं कर सकता। हमें जन–जागरण द्वारा यह समझाना होगा कि देश का प्रत्येक वृद्धजन सम्मानीय है और समाज तथा राष्ट्र उनसे सहयोग और मार्गदर्शन चाहता है।

आवश्यक कदम

वृद्धजनों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए सर्वप्रथम पारिवारिक स्तर पर उनकी समस्याओं का निराकरण होना चाहिए। वृद्धजनों की मेहनत से बनी व्यवस्था में हम सुखपूर्वक रह रहे हैं और उन्नति के सपने देख रहे हैं ऐसे में हर परिवार का कर्तव्य है कि वे अपने बुजुर्गों की तन–मन–धन से सेवा करे और उन्हें मानसिक शांति तथा भावनात्मक सुरक्षा दे जिनसे वे शेष जीवन रचनात्मक सहयोग कर सकें। पारिवारिक स्तर पर भी वृद्धजन काफी सहयोगी हो सकते हैं। मुख्यतः भावी पीढ़ी के विकास में वे अच्छी भूमिका निभा सकते हैं जिससे बच्चों का व्यक्तित्व निखरे और उनके संग–साथ से उनमें नैतिक मूल्यों का विकास हो सके।

वृद्धजनों को सामाजिक स्तर पर जोड़ने हेतु विभिन्न सदनों में उनका स्थान सुनिश्चित करना चाहिए जिससे उनके अनुभवों का लाभ लेकर हम प्रगति कर सकें। उन्हें नई शैली और प्रणाली से भी अवगत कराएं जिससे वे स्वयं भी क्रियाशील और उत्साही रहें। उनके लिए विशेष संस्थाओं की व्यवस्था हो जहां वे अपनी रुचि के कार्य कर सकें तथा अन्य लोगों को भी अपना हुनर सिखा सकें। समाज सेवा, अध्यापन, सामाजिक कुरीतियों के प्रति लोगों को जाग्रत करना, विभिन्न समस्याओं पर दिशा–निर्देश और सलाह देना, कला की साधना तथा प्रशिक्षण देना ऐसे कई कार्य हैं जिनमें वृद्धजनों का सहयोग लिया जा सकता है।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उनके लिए सुविधाएं और सकारात्मक वातावरण निर्मित करना हमारा कार्य ही नहीं, कर्तव्य भी है। राष्ट्रीय स्तर पर भी इस समस्या को गम्भीरता से लेकर तुरन्त कुछ जरूरी कदम उठाने की जरूरत है। उल्लेखनीय है कि स्वीडन में 67 वर्ष की आयु के बाद ही व्यक्ति को वृद्ध माना जाता है। राष्ट्रीय सेवा से सेवा–निवृत्ति की आयु भी यही है। वृद्ध व्यक्ति को आकर्षक पेंशन मिलती है। बस या रेल किराया तथा मकान किराया भी आधा ही लिया जाता है तथा अन्य सुविधाओं का भी ध्यान रखा जाता है।

हमारे यहां पर भी गरीब–आश्रित वृद्धों को उचित पेंशन का पुनः निर्धारण करना होगा और पेंशन वितरण प्रणाली में भी सुधार करना चाहिए। वृद्ध व्यक्ति का पेंशन के लिए कार्यालय के वर्षों चक्कर लगाना किसी भी सरकार के लिए शर्म की बात है। उनकी अन्य समस्याओं को जानने के लिए शोध–अध्ययन की जरूरत है जिनके परिणाम जानकार हम यह भी जान सकेंगे कि कैसे देश के सम्मानीय वर्ग को विकास में भागीदार बनाएं और इतनी बड़ी जनसंख्या का रचनात्मक सहयोग प्राप्त कर सकें। ❑

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग
ईस्ट ब्लाक–4 लेवल–7
आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

मध्य प्रदेश के उज्जैन जिले में महिला सशक्तिकरण की जमीन तैयार

179 महिला स्वयं सहायता समूह गठित

उज्जैन जिले के कमजोर, दलित और पिछड़े वर्ग की महिलाओं को आर्थिक संबल प्रदान करने, उन्हें महाजनी ब्याज से छुटकारा दिलाने और अपने भविष्य की खुद मुख्तयार बनाने की दिशा में महिला बाल विकास विभाग द्वारा एक सशक्त जमीन तैयार की जा रही है। इस पहल में सबसे अहम भूमिका निभा रही हैं जिले की आंगनबाड़ी कार्यकर्ता।

जिले की महिदपुर तहसील के ग्राम घोंसला में गांव की दस घास बेचने वाली महिलाओं ने अपना समूह बनाया है। इनकी अध्यक्ष हैं यशोदाबाई। उनसे पूछने पर कि स्वयं सहायता समूह के गठन से उनके सीधे क्या लाभ हुए हैं तो जवाब देती हैं कि उनको अब किसी के आगे हाथ नहीं फैलाना पड़ रहा है। पहले सेठ साहूकारों को पांच टका ब्याज देकर ही सहायता मिल पाती थी। अब हम सब महिलाओं ने बैठक में निर्णय लिया है कि केवल दो प्रतिशत ब्याज पर अपने समूह की सदस्याओं को हारी–बीमारी में ऋण देंगे। यह पूछने पर कि कोई महिला टाइम पर पैसा वापस नहीं करे तो यशोदाबाई ने पलट कर जवाब दिया "हम उसे डंड (दंड) वसूलूंगा।" घोंसला के समूह की महिलाओं के बचत समूह ने छः माह में कोई आठ हजार रुपये की राशि बैंक में जमा कराई है और प्रतिमाह बैठक कर आपस में लेन–देन कर रही हैं।

इसी प्रकार ग्राम लांबी खेड़ी में तेज–तर्रार आंगनबाड़ी कार्यकर्ता रशीदा बी ने महिलाओं का स्वयं सहायता समूह बनाया है। इसमें ज्यादातर महिलाएं पढ़ी–लिखी नहीं हैं तथा खेतिहर मजदूर हैं। इस समूह की अध्यक्ष पचास वर्षीय रुखमाबाई है। ये महिलाएं अपनी मजदूरी में से 100–100 रुपये प्रतिमाह की बचत कर बैक में जमा कर रही हैं और अब तक 6,600 रुपये की रकम इनके खाते में जमा है। ग्यारह महिलाओं के समूह में से किसी के बच्चे की ड्रेस व किताबों के लिए पांच सौ रुपये का तो, किसी ने खाद–बीज के लिए एक हजार रुपये का ऋण उठा रखा है। इस ऋण पर समूह दो प्रतिशत ब्याज वसूलता है। ब्याज की राशि बचत खाते में जमा होती है और समूह की पूंजी बढ़ रही है।

आंगनबाड़ी कार्यकर्ता रशीदा बी, जो पांच जमात पढ़ी है, इस समूह की सलाहकार है। वह कहती है समूह की सब महिलाएं हर ग्यारस को बैठक करती हैं और लेन–देन का निर्णय करती हैं।

इसी प्रकार ग्राम धुलेट के महिला समूह की सदस्यों से जब यह पूछा गया कि क्या वे अपने द्वारा की गई आठ हजार रुपये की बचत में से पूरे आठ हजार रुपये अपने समूह की किसी गरीब महिला को भैंस खरीदने क लिए दे सकती हैं तो वे सोचने पर मजबूर हो गईं। कुछ देर रुककर उन्होंने कहा हमको ग्रुप की सभी सदस्यों की जरूरत का ध्यान रखना होगा इसलिए भैंस की जगह बकरी के ऋण पर विचार करेंगी।

स्वयं सहायता समूह के माध्यम से आ रही महिला क्रांति का हालांकि यह शुरुआती दौर है लेकिन गरीब और पिछड़े वर्ग की इन महिलाओं के शुरुआती तेवर भी कुछ कम नहीं हैं। ऐसा लगता है महिला बाल विकास विभाग का मानदेय प्राप्त करने वाली आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं द्वारा की जा रही पहल निश्चित रूप से रंग लाएगी। ❑

ग्रामीण क्षेत्रों में कुपोषण

कुपोषण की समस्या हमारे देश मे, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, विकराल रूप से विद्यमान है। बच्चे और महिलाएं इसकी चपेट में ज्यादा आते हैं। गरीबी के अलावा संतुलित भोजन के विभिन्न तत्वों के बारे में जानकारी का अभाव भी इसका मुख्य कारण है। इस लेख में इन तत्वों की जानकारी देने के साथ लेखक ने सुझाव दिया है कि बाल-विवाह पर रोक लगाई जानी चाहिए ताकि छोटी उम्र में लड़कियों के गर्भधारण करने पर उन्हें पौषाहार न मिलने से मां और बच्चे के स्वास्थ्य पर जो प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, उससे बचा जा सके।

शोधों और सर्वेक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कुपोषण से प्रतिवर्ष अनेक बच्चे असमय ही काल-कवलित हो जाते हैं। कुपोषण विकासशील देशों की एक गंभीर समस्या है। जब व्यक्ति को उसकी शारीरिक आवश्यकता के अनुकूल उपयुक्त मात्रा में सभी भोज्य तत्व नहीं मिलते या आवश्यकता से कम मिलते हैं जिसके कारण शरीर की वृद्धि और विकास तथा उसकी क्रियाशीलता पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है तो यह कुपोषण कहलाता है। कुपोषण के अनेक कारण हैं – जैसे अपर्याप्त भोजन, अनुपयुक्त भोजन, अनुचित भोजन, भोजन सम्बन्धी आदतें, अस्वास्थ्यकर वातावरण, अत्यधिक कार्य, निद्रा की कमी, इत्यादि। उपर्युक्त कारण एक दूसरे से जुड़े हैं। हमारे देश में गरीबी के कारण लोग कुपोषण के शिकार हो जाते हैं। कुपोषित होने से उत्पादन क्षमता और कार्यक्षमता कम हो जाती है और व्यक्ति गरीब ही बना रहता है। इस तरह यह दुष्चक्र चलता रहता है। अगर शरीर की आवश्यकतानुसार उपयुक्त तथा पौष्टिक भोजन का अभाव हो अर्थात भोजन या तो मात्रा में कम हो या उसमें शरीर की वृद्धि के लिए आवश्यक तत्वों की कमी हो तो कुपोषण की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कभी-कभी शारीरिक अवस्था, आयु और कार्य के अनुरूप भोजन न होना भी इस समस्या को उत्पन्न करता है। कुछ भोजन अपेक्षाकृत अपचनशील भी होता है। इसके अतिरिक्त यदि पौष्टिक भोजन को भी अनियमित रूप से समय-कुसमय या जल्दी-जल्दी खाया जाए तो भोजन से वांछित पोषक तत्वों का अधिकतम लाभ नहीं उठाया जा सकता है। कुपोषण के कारण आज हमारे देश में अनेक बच्चे पांच साल से कम उम्र में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। युवक-युवतियों के रक्त-संगठन में परिवर्तन आ जाता है तथा व्यक्ति की कार्य-क्षमता भी कम हो जाती है।

बच्चों के कुपोषित होने का सबसे बड़ा प्रमुख कारण है मां का कुपोषित होना और गर्भावस्था के दौरान उसे अतिरिक्त पोषक आहार न मिल पाना। साथ ही अधिक बच्चों का जन्म, दो बच्चों के जन्म के बीच में कम अंतर तथा, कम आयु में मां बनना आदि भी बच्चों के कुपोषण के कारण हैं। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् ने गर्भवती महिलाओं के लिए प्रतिदिन 2500 कैलोरी ऊर्जा तथा 55 ग्राम प्रोटीन देने वाला आहार आवश्यक बताया है। लेकिन आंकड़े बताते हैं कि हमारे देश में एक गर्भवती महिला को दिन भर में भोजन से केवल 1420 कैलोरी ऊर्जा तथा 37 ग्राम प्रोटीन ही मिल पाती है। इसी प्रकार एक वर्ष से पांच वर्ष के बच्चों को औसत रूप से केवल 1300 कैलोरी ऊर्जा और 19 ग्राम से कम प्रोटीन मिल पाता है जबकि जरूरत होती

* प्राध्यापक, रसायन विभाग, इलाहाबाद, विश्वविद्यालय, इलाहाबाद-211002

की समस्या और समाधान

डा. दिनेश मणि

है 1420 कैलोरी ऊर्जा और 19.3 ग्राम प्रोटीन की। चिकित्सा विशेषज्ञों का अनुमान है कि हमारे देश में प्रतिवर्ष जितने बच्चों का जन्म होता है उनमें से केवल लगभग 13 प्रतिशत ही स्वस्थ व्यक्तियों के रूप में विकसित हो पाते हैं। बाकी 87 प्रतिशत में से लगभग 17 प्रतिशत की तो बड़े होने से पहले ही मृत्यु हो जाती है और अन्य शारीरिक–मानसिक रूप से कमजोर रह जाते हैं।

कुपोषण के सामान्य संकेत

बालों की चमक में कमी और उनका आसानी से टूटना, बालों में खुश्की, कंघी करते समय बालों का तेजी से झड़ना, चेहरा सूखा रहना, खराश होना, त्वचा की सतह पर जलन, मुंह तथा नाक के भागों में जलन, आंख की चमक तथा स्निग्धता समाप्त हो जाना, होठों का फटना, पपड़ी जमना तथा उसमें सूजन आना, जीभ में जलन, दर्द, स्वादहीनता तथा जीभ का रंग बदल जाना, दंत–क्षय होना तथा दांतों का खड़िया जैसे भूरा या बदरंग हो जाना, मसूड़े फूल जाना, भीतर से मवाद आना, खून आना, त्वचा तथा आंखों में असामान्य सूखापन, पैराटिड तथा थायराइड ग्रंथियों में वृद्धि होना इत्यादि कुपोषण के सामान्य संकेत हैं।

कुपोषण सम्बन्धी कुछ बीमारियां इस प्रकार हैं –

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण : यह खासकर 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों में पाया जाता है

क्योंकि दूध छुड़ाने के बाद उन्हें पर्याप्त मात्रा में पूरक आहार नहीं मिलता है।

क्वासियोरकर : इसमें शरीर में ऊर्जा तो होती है परन्तु भोजन में प्रोटीन की कमी होती है। यह आमतौर पर बच्चे में एक साल की आयु के बाद होता है।

लक्षण : विकास की गति धीमी पड़ना। मुख्यतः एड़ी और पांवों में हमेशा सूजन रहना। बच्चे का चेहरा चन्द्राकार दीखना, बालों का रंग प्रायः लाल या भूरा हो जाना तथा बाल आसानी से झड़ जाना। बच्चे की भूख खत्म हो जाना इत्यादि।

मरासमस या सूखा रोग :

यह सामान्यतया एक वर्ष से कम आयु के बच्चों में होता है जिसका कारण अपर्याप्त भोजन है। इसमें प्रोटीन और ऊर्जा दोनों की कमी हो जाती है।

लक्षण : विकास काफी हद तक रुक जाता

है। विकास चार्ट में वजन तीसरी या चौथी रेखा से कम होना, त्वचा में वसा कम होना तथा त्वचा ढीली हो जाना फलतः बच्चा बूढ़ा दिखाई देता है। जांघों और नितम्बों पर ढीली मांसपेशियां होना, बच्चा हमेशा भूखा रहता है और रोता रहता है।

रोकथाम : यथासंभव स्तनपान कराते रहें तथा उचित समय पर ऊपरी आहार शुरू करें। बच्चे को दिन में पांच–छः बार खाना खिलाएं तथा उसके लिए अनाज–दाल से बने व्यंजनों में तेल तथा वसा और गुड़ या चीनी का भी समावेश करें। साथ ही दूध भी देते रहें।

रक्ताल्पता

खून में लौह तत्व की कमी होना ही रक्ताल्पता अर्थात एनीमिया कहलाता है। कुपोषण, आहार में आयरन और फालिक अम्ल की कमी, चोट, लगने, अंकुश कृमि या मलेरिया के कारण शरीर में खून की कमी हो जाती है।

लक्षण : होंठ, जीभ, नाखून और हथेली के भीतरी हिस्से पीले दिखाई पड़ते हैं। व्यक्ति जल्दी थक जाता है और उदास दिखता है। व्यक्ति लम्बी–लम्बी सांसें लेता है और उसकी भूख खत्म हो जाती है।

रोकथाम : एनीमिया से बचने के लिए हरी पत्तेदार सब्जियों जैसे पालक, पुदीना, बथुआ, मेथी, मूली की पत्तियां, सहजन की पत्तियां, धनिया की पत्तियां तथा विटामीन सी युक्त आहार जैसे अमरूद, आवला, संतरा, नींबू, इत्यादि का समावेश दैनिक आहार में करना चाहिए।

विटामिन "ए" की कमी से बच्चों में रतौंधी रोग हो जाता है। आंख की रोशनी कम हो जाती है। विटामिन "ए" की आपूर्ति के लिए आहार में हरी पत्तियां, दालें, दूध और दूध से बने पदार्थ, पीले फल (जैसे आम, अमरूद, पपीता) सम्मिलित करना चाहिए।

विटामिन बी–काम्पलेक्स की कमी से शारीरिक वृद्धि रुक जाती है। त्वचा, जीभ तथा अन्य अंगों की कार्यक्षमता में कमी आने लगती है। गर्भावस्था और दूध पिलाने के दौरान भी बी–काम्पलेक्स की कमी हो जाती है।

थायमिन तथा नियासिन नामक विटामिन चावल और गेहूं को खाने योग्य बनाने की प्रक्रिया में नष्ट हो जाता है। थायमिन की कमी से 'बेरी' बेरी नाम की बीमारी होती है। इस बीमारी में ऊतकों में पानी भर जाता है। बहुत अधिक कमजोरी, सिददर्द, पक्षाघात से लेकर हृदय–गति रुक जाना तक हो सकता है। वैसे बच्चे जिनकी मां को ज्यादा दूध नहीं होता, ज्यादातर इसके शिकार होते हैं। ऐसे शिशु रोते हुए दिखते हैं मगर आवाज नहीं निकलती। पहले से पांचवे महीने के बीच यह बीमारी होती है और परिणामस्वरूप मृत्यु तक हो जाती है। राइबोफ्लेविन की कमी से त्वचा तथा होंठों के किनारे फट जाते हैं जिसे चिलोसिस कहते हैं। यह अक्सर बच्चों में पाया जाता है। इससे मुंह और जीभ में छाले भी हो जाते हैं। नियासिन की कमी से पेलाग्रा नामक बीमारी होती है। पेलाग्रा में त्वचा में रूखापन, अयरिया, जीभ, मुख तथा मसूड़ों में सूजन तथा मानसिक विकृति होती है। यह अधिकांशतः वैसे लोगों में पाया जाता है जो मक्का का आहार लेते हैं, क्योंकि मक्का शरीर में नियासिन के शोषण में बाधक डालता है तथा इनके आहार में प्रोटीन की भी कमी होती है।

दूध और दूध से बने पदार्थ में राइबोफ्लेबिन अधिक मात्रा में मिलता है। मूंगफली इसका प्रमुख स्रोत है। अतः साबुत अनाज, छालों तथा मूंगफली के सेवन से बी–काम्पलेक्स की कमी दूर की जा सकती है।

विटामिन "सी" की कमी

विटामिन सी की कमी से स्कर्वी नामक बीमारी होती है।

लक्षण : मसूड़ों में सूजन होना, खून आना – दांतों का ढीला पड़ जाना – जोड़ों में दर्द आदि सामान्य स्कर्वी रोग के लक्षण हैं। विटामिन सी की कमी से हल्की चोट लगने पर भी शरीर पर नीले धब्बे हो जाते हैं।

स्रोत : कच्ची हरी पत्तेदार सब्जियां, टमाटर और समस्त खट्टे फल विटामिन सी के अच्छे स्रोत हैं। विटामिन सी सामान्य सर्दी–जुकाम तथा अन्य रोगों से हमारे शरीर की सुरक्षा करता है।

आयोडिन की कमी :

आयोडिन की कमी से वृद्धि में रुकावट, मानसिक विकास तथा थायराइयड ग्रंथि का आकार असामान्य रूप से बढ़ जाता है जिसे गलगंड या घेंघा कहते हैं। यह रोग प्रायः पहाड़ी क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है, क्योंकि वहां की मिट्टी तथा पानी में आयोडिन की कमी होती है। गर्भवती को अगर आयोडिन की कमी हो जाती है तो बौने, गूंगे–बहरे तथा मानसिक मंदता वाले बच्चे जन्म लेने की सम्भावना बढ़ जाती है।

स्रोत : इसकी रोकथाम के लिए आयोडिनयुक्त नमक का सेवन करना चाहिए।

कैल्शियम और फास्फोरस की कमी

कैल्शियम एवं फोस्फोरस का अभाव तथा विटामीन "डी" की अपर्याप्त उपलब्धता के कारण बच्चों में रिकेट्स तथा वयस्कों में आस्टियोमेलेसिया नामक बीमारी होती है। ये रोग अस्थि विकलांगता उत्पन्न करते हैं जैसे धनुषाकार टांगें, कबूतरनुमा वक्ष, दांत के इनामेल का क्षय होना तथा हड्डियों की दृढ़ता कम हो जाना तथा उनमें पीड़ा होना आदि। जिससे हड्डी टूटने का भय रहता है।

स्रोत : दूध और दूध से बने पदार्थ विटामिन डी, कैल्शियम और फास्फोरस के अच्छे स्रोत हैं। इस तरह अगर अपने आहार का ध्यान रखा जाए तो अनेक बीमारियों से बचा जा सकता है।

कुछ आहार विशेषज्ञों का कहना है कि यदि प्रारंभ में कुपोषित बच्चों को बाद में पौष्टिकता आहार दिया जाए तथा उचित देखभाल की जाए तो कुपोषण के प्रभाव को काफी हद तक कम किया जा सकता है। लेकिन बहुत से वैज्ञानिक इस धारण से सहमत नहीं हैं। इन वैज्ञानिकों का मानना है कि कुपोषण के प्रारंभिक प्रभाव को केवल कुछ

(शेष पृष्ठ 41 पर)

प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने वालों के लिए उपयोगी पत्रिका

योजना

आर्थिक एवं सामाजिक विषयों की मासिक पत्रिका

योजना में आप पाएंगे :

- अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर ज्ञानवर्धक सामग्री
- विकास तथा योजना प्रक्रिया का गहन एवं विस्तृत विश्लेषण
- पर्यावरण, साक्षरता, विज्ञान एवं टेक्नोलौजी और पर्यटन जैसे आर्थिक-सामाजिक विषयों पर विशेषज्ञों द्वारा लिखित सारगर्भित लेख
- विभिन्न विकास योजनाओं की जानकारी

पत्रिका आज ही खरीदिए अथवा नियमित ग्राहक बनिए

योजना की विषय सामग्री का चयन प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने वाले युवाओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाता है जो उनकी सफलता में सहायक हो सकती है।

(*योजना* अंग्रेजी, उर्दू, असमिया, बंगला, गुजराती, कन्नड़, मराठी, मलयालम, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु और तमिल में भी निकलती है)

चंदे की दरें : ☐ एक वर्ष : 70 रु. ☐ दो वर्ष : 135 रु. ☐ तीन वर्ष : 190 रु.

मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/ पोस्टल आर्डर निम्न पते पर भेजें :

विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग
पत्रिका एकांश, पूर्वी ब्लाक-4, लेवल-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066
दूरभाष : 6105590

विक्रय केन्द्र प्रकाशन विभाग

☐ पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001 ☐ सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001 ☐ हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 ☐ कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038 ☐ 8-एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069 ☐ राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600009 ☐ बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004 ☐ प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001 ☐ 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226019 ☐ राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500001 ☐ प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034

विक्रय केंद्र पत्र सूचना कार्यालय

☐ सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.) ☐ 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003 ☐ बी-7, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर (राजस्थान)

आदिवासी उपयोजना के अंतर्गत

जन जातीय क्षेत्रों में रोजगार और आय – एक अध्ययन

बस्तर जिले के विशेष संदर्भ में

प्रो. बी.के. चौरसिया*

विगत पांच दशक से केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारें दोनों ही जनजातियों के विकास के बारें में प्रायः सजग रही हैं। यही कारण है कि इनके विकास हेतु अनेक योजनाएं निर्मित की गईं, इनका क्रियान्वयन भी किया गया, परन्तु जनजातियों के विकास में ये कहां तक सफल हुईं, यह कहा नहीं जा सकता। अध्ययन से पता चलता है कि प्रारंभ में जनजातियों के विकास हेतु सामान्य योजनाओं को ही लागू किया जाता रहा लेकिन जब यह देखा गया कि इन सामान्य योजनाओं से इन जनजातियों का अपेक्षित विकास नहीं हो रहा तब इनके त्वरित विकास हेतु 1975–76 से आदिवासी उपयोजना को लागू किया गया जिसके दो प्रमुख उद्देश्य थे :

- जनजातीय क्षेत्रों तथा गैर जनजातीय क्षेत्रों के बीच पाई जाने वाली आर्थिक विषमताओं को घटाना।
- जनजातियों के रहन–सहन के स्तर में सुधार लाकर उन्हें निर्धनता की रेखा से ऊपर उठाना।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य इस बात का पता लगाना था कि उपयोजना का जनजातियों की "रोजगार–आय" पर क्या प्रभाव पड़ा है? योजना में क्या–क्या कमियां हैं जिनकी वजह से जनजातीय समुदाय लाभान्वित नहीं हो सका? इस अध्ययन का क्षेत्र जनजाति बहुल जिला बस्तर है जिसमें सात जनजातीय उपयोजनाएं कार्यान्वित हैं। इनके नाम हैं – जगदलपुर, भानुप्रतापपुर, कोंडागांव, नारायणपुर, कोंटा, दंतेवाड़ा, बीणापुर, इत्यादि। इन उपयोजनाओं में से कोंडागांव जनजाति उपयोजना को सूक्ष्म अध्ययन के लिए चुना गया। कोंडागांव तहसील के दो खंड कोंडागांव तथा फुरसगांव के तीन ग्राम राजागांव, श्यामपुर तथा भनपुरी जिसमें 160 न्यादर्शी (100 जनजाति, 25 अनुसूचित जाति तथा 35 गैर जनजाति) परिवारों का सोउद्देश्य निदर्शन पद्धति के आधार पर चुना गया है। प्रश्नावली के माध्यम से सर्वेक्षण किया गया तथा अपेक्षित प्राथमिक समंक एकत्रित किए गए। एकत्रित समंको का सरल सांख्यिकीय विधियों जैसे प्रतिशत, औसत आदि से विश्लेषित किया गया।

* विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, दुर्गा स्नातकोत्तर महाविद्यालय रायपुर मध्य प्रदेश

अध्ययन के निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षों को दो भागों में विभक्त किया गया :

(1) रोजगार पर प्रभाव (2) आय पर प्रभाव।

रोजगार पर प्रभाव : सर्वेक्षित ग्रामों के चुने हुए परिवारों से रोजगार सम्बन्धी सूचनाएं प्राप्त करने पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुए उन्हें तालिका 1 में प्रस्तुत किया गया है :

तालिका 1 से ज्ञात होता है कि जनजाति उपयोजना के अंतर्गत सर्वाधिक (90.87 प्रतिशत) जनजातियों को, उसके पश्चात् अनुसूचित जातियों (85.36 प्रतिशत) तथा सबसे कम गैर जनजातियों को (80.00 प्रतिशत) रोजगार प्राप्त हुआ है। रोजगार प्राप्त करने वालों में जनजातियों का प्रतिशत सर्वाधिक है जिसका कारण यह है कि यह समुदाय दैनिक निर्मित होने वाली वस्तुओं की ओर अधिक उन्मुख हुआ है क्योंकि ये वस्तुएं शीघ्र लाभ प्रदान करने वाली होती हैं और जनजाति समुदाय भी तात्कालिक लाभ को देखता है। इसके पश्चात् रोजगार प्राप्त करने वालों में अनुसूचित जाति का प्रतिशत दूसरे स्थान पर है जिसका कारण यह है कि यह समुदाय अब गैर जनजातियों के यहां मजदूरी न करके स्वयं का काम करता है। दैनिक निर्मित होने वाली वस्तुओं को निर्मित कर अपने परिवार का भरण पोषण करता है। मध्यस्थ लोगों की ठगी से यह समुदाय अब बचना सीख–सा गया है। रोजगार प्राप्त करने वालों में सबसे कम प्रतिशत गैर जनजातियों का रहा है जिसका कारण इस समुदाय द्वारा कृषि पर अधिक विश्वास करता है अर्थात इस समुदाय द्वारा कृषि कार्य अधिक किया जाता है। उसके अतिरिक्त यह समुदाय उस कार्य को करना अधिक पसन्द करता है जिस कार्य से अधिक आय प्राप्त होती है जैसे चक्की, जनरल स्टोर्स, पान का ठेला, सामान्य दुकान, कपड़ा दुकान, और सोने चांदी के गहने आदि।

जहां तक उपयोजना के अंतर्गत रोजगार के विवरण का प्रश्न है उसे तालिका 2 से जाना जा सकता है। तालिका 2 से पता चलता है कि तीनों समुदाय द्वारा दैनिक उपयोग वाली वस्तुएं जैसे बांस की टोकरी तथा मिट्टी के बर्तन अधिक बनाए जाते हैं, क्योंकि ये वस्तुएं शीघ्र बिक जाती हैं जिससे तात्कालिक लाभ प्राप्त होता है।

आय दृष्टिकोण : जहां तक न्यादर्शी

तालिका 1

रोजगार की प्राप्ति

विवरण	परिवारों की संख्या	रोजगार योग्य व्यक्ति	आदिवासी उपयोजना के अंतर्गत रोजगार प्राप्ति	प्रति परिवार रोजगार	प्रतिशत कालम 3 से 4 का
जनजाति	100 (62.5)	263 (58.44)	239 (60.81)	2.39	90.87
अनुसूचितजाति	25 (15.6)	82 (18.22)	70 (17.81)	2.8	83.36
गैरजनजाति	35 (21.9)	105 (23.33)	84 (21.38)	2.4	80.00
योग	160 (100)	450 (100)	393 (100)	2.456	87.33

कोष्ठक के समंक प्रतिशत के सूचक हैं।

परिवारों की आय का प्रश्न है उसे तालिका 3 में प्रस्तुत किया गया है। विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सबसे अधिक औसत वार्षिक आय 2551.85 रुपये (प्रति व्यक्ति 419.32 रुपये) गैर जनजातियों की हैं, जिसका कारण यह है कि उस समुदाय के उत्पादन के साधनों जैसे भूमि तथा पूंजी पर तो वर्चस्व है। साथ ही यह समुदाय मध्यस्थता सम्बन्धी क्रियाओं से भी अधिक आय अर्जित कर लेता है। सबसे कम आय जनजातियों की है, क्योंकि यह समुदाय वनोपज पर ही अधिक विश्वास करता है जिसका उचित मूल्य नहीं मिल पाता क्योंकि

तालिका 2

रोजगार का वितरण

विवरण	रोजगार प्राप्त व्यक्ति	बांस की टोकरी तथा मिट्टी के बर्तन बनाना	खपरैल, दरी, झाड़ू व रस्सी बनाना	जूता, लुहारी, चक्की व सोने–चांदी के गहने बनाना
जनजाति	239 (100)	139 (58.15)	59 (24.68)	41 (17.17)
अनुसूचितजाति	70 (100)	35 (50.00)	26 (37.14)	9 (12.88)
गैरजनजाति	84 (100)	42 (50.00)	21 (25.00)	21 (25.00)
योग	393 (100)	216 (54.96)	100 (26.97)	71 (18.07)

तालिका 3

वार्षिक आय (रुपयों में)

क्र.	समुदाय	औसत वार्षिक आय	
		प्रति परिवार	प्रति व्यक्ति
1.	अनुसूचित जनजाति	1813.87	372.45
2.	अनुसूचित जाति	2097.25	397.21
3.	गैरजनजाति	2551.85	419.32

जनजातीय क्षेत्रों में वनोपज संग्रह केन्द्र नहीं खोले गए हैं। अतः मजदूर होकर इन्हें गैर जनजाति वर्गों में सस्ती दर पर माल बेचना पड़ता है। इस समुदाय की आय कम होने का दूसरा कारण यह भी है कि उस समुदाय द्वारा आज भी पुराने ढंग से कृषि कार्य किया जाता है। यह समुदाय कृषि की वैज्ञानिक पद्धतियों से दूर है। परिणामतः कृषि की उत्पादकता भी कम है जिसका इनकी आय पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

उपयोजना की कमियां

अध्ययन से पता चलता है कि यह योजना भी अपने उद्देश्य को पूर्ण नहीं कर पा रही है क्योंकि अभी भी इसमें निम्नलिखित कमियां हैं :

- योजना की प्रकृति और जनजाति विकास क्षेत्र की विशेषताओं में समानता नहीं है।
- गैर जनजाति इन योजनाओं का लाभ प्राप्त कर लेते हैं क्योंकि योजना में प्राथमिकता को महत्व नहीं दिया गया है।
- योजना में जनजाति क्षेत्रों की विशेष समस्याओं और आवश्यकताओं को पर्याप्त रूप से सम्मिलित नहीं किया गया जैसे कृषि निर्वसन की समस्या, जंगल काटना, गैर आदिवासियों द्वारा शराब बेचना तथा शहरी व्यक्तियों द्वारा ठगा जाना आदि।
- जनजाति के लोग अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं पाते क्योंकि गैर जनजाति के लोगों का मध्यस्थ के रूप में बाजार में वर्चस्व है।
- योजना का निर्माण करते समय जनजातीय संस्कृति, रीति–रिवाज तथा परम्पराओं को ध्यान में नहीं रखा गया है इसलिए योजना की सफलता में अनेक बाधाएं हैं।

सुझाव

योजनाओं से जनजातीय क्षेत्र का विकास तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि उनमें स्वयं ही विकास की भावना जागृत नहीं हो जाती। *"बहुस्तरीय तथा सूक्ष्म योजनाएं"* केवल यंत्र हैं जिनके माध्यम से जनजाति क्षेत्रों में छिपी हुई शक्ति का विकास किया जा सकता है जनजातियों का नहीं। जनजातियों के विकास हेतु इनकी भावनाओं को रोजगारोन्मुख बनाना होगा। ❑

ग्रामीण क्षेत्रों में वैकल्पिक ऊर्जा : बायोगैस

(राजस्थान के विशेष सन्दर्भ में)

भारत भूषण शर्मा

गोबर, जानवरों के मूत्र और पानी के घोल को वायु की अनुपस्थिति में सड़ाने से तैयार गैस बायोगैस कहलाती है। यह गैस आज राजस्थान के गांवों में काफी लोकप्रिय हो रही है। इससे किसानों को रसोई के लिए ईंधन, खेती के लिए खाद और घरों में रोशनी हेतु गैस बत्ती मिल रही है। इस समय राजस्थान में 58,000 से अधिक बायोगैस संयंत्र हैं और सरकार ने पिछले वर्ष इसके लिए एक करोड़ रुपये का बजट प्रावधान किया।

मानव के आर्थिक अभ्युदय, भौतिक विकास, वैज्ञानिक उपलब्धियों और यहां तक कि जीवन चक्र में ऊर्जा एक अनन्य साधन है। ऊर्जा चाहे शारीरिक हो अथवा मानसिक, आत्मिक हो या आध्यात्मिक, प्राकृतिक हो अथवा मानवकौशल से निर्मित, बिना ऊर्जा के न तो सृष्टि का चक्र चलता है और न ही विकास का पहिया घूमता है। वस्तुतः ऊर्जा ही विकास की धुरी है। यही कारण है कि पाषाण युग में जब मानव ने पत्थरों को रगड़कर आग जलाना सीखा तब से लेकर आज तक वह ऊर्जा के विभिन्न स्रोतों की तलाश करता आया है।

आदिकाल से ऊर्जा के परम्परागत स्रोतों के अविवेकपूर्ण दोहन के कारण वर्तमान में ऊर्जा संकट गहराता जा रहा है। इस संकट को दूर करने के लिए बायोगैस एक सशक्त विकल्प के रूप में उभर कर सामने आई है। विशेषकर राजस्थान राज्य के ग्रामीण इलाकों में तो यह विशेष रूप से उपयोगी है। भारत में राजस्थान एक ऐसा राज्य है जहां प्रायः हर जिले में बायोगैस योजना के अन्तर्गत पारिवारिक तथा संस्थागत बायोगैस संयंत्रों की स्थापना की जा रही है। इस संयत्र को 'जादू का दीया' भी कहा गया है।

बायोगैस क्या है?

जानवरों के गोबर, मलमूत्र और पानी के घोल को गैस संयंत्र में हवा की अनुपस्थिति में सड़ाने की प्रक्रिया से तैयार की गई गैस

को बायोगैस कहा जाता है। यह एक स्वच्छ, सस्ता और निरापद ईंधन है। बायोगैस का रासायनिक संगठन इस प्रकार है :

मीथेन	6.5 प्रतिशत
कार्बन–डाई–आक्साइड	30 प्रतिशत
हाइड्रोजन	12 प्रतिशत
हाइड्रोजन सल्फाइड	1 प्रतिशत
नाइट्रोजन	1 प्रतिशत
कार्बन मोनो आक्साइड	0.8 प्रतिशत
आक्सीजन	0.9 प्रतिशत

स्रोत : राजस्थान सुजस संचय, सूचना एवं जनसम्पर्क निदेशालय

बोयोगैस संयंत्र से निकाली गई खाद में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश तीनों गोबर की खाद की तुलना में अधिक होते हैं। बायोखाद को जैविक खाद भी कहा जाता है। इससे खेतों में खरपतवार नहीं पनपते और भूमि में अधिक समय तक नमी बनी रहती है। बायोगैस से उपचारित किए हुए बीज जल्दी और अधिक संख्या में अंकुरित होते हैं।

कैसे बनता है बायोगैस संयत्र?

लोहे और ईंट–सीमेन्ट से बने बायोगैस संयंत्र में जानवरों के गोबर, मलमूत्र तथा पानी के घोल को खास तौर से बनाए गए वायुरहित गड्ढे में रखा जाता है। गर्मी के कारण यह घोल कुछ दिन बाद सड़ने लगता है और जीवाणुओं की मदद से कई पदार्थों का निर्माण करता है। इस संयत्र के पांच भाग होते हैं – मिश्रण बनाने वाली टंकी और प्रवेश द्वार, डायजेस्टर या पाचक खण्ड, गैस, होल्डर, निकास द्वार और कम्पोस्ट के लिए गड्ढा, गैस का मुख्य निकास, गैस चूल्हा, बत्ती और बायोगैस ईंधन से चलने वाली अन्य वस्तुएं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किए जाने वाले बायोगैस संयंत्र दो प्रकार के माडल पर आधारित होते हैं – पहला, खादी और ग्रामोद्योग कमीशन माडल। दूसरा, जनता अथवा दीनबन्धु माडल। ये दोनों ही माडल राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) द्वारा अनुमोदित हैं।

राजस्थान में 1981–1982 से बायोगैस विकास परियोजना की शुरुआत की गई। इसके तहत ईंधन के रूप में लकड़ी पर निर्भरता को कम करने, वनों का विनाश रोकने तथा प्रदूषण पर अंकुश लगाए जाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इस लक्ष्य को पाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में बायोगैस संयंत्रों की स्थापना को प्रोत्साहन देने के लिए किसानों तथा पशुपालकों को सरकार द्वारा कई तरह से लाभ पहुंचाया जाता है। बायोगैस संयंत्र के लाभान्वितों को 1,500 रुपये से 2,600 रुपये तक केन्द्रीय अनुदान दिया जाता है तथा कर्मचारियों का संस्थापन व्यय राज्य आयोजन मद से वहन किया जाता है। परियोजना के अन्तर्गत राज्य सरकार द्वारा भी आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है :

- सभी प्रकार के बायोगैस संयंत्रों और सभी क्षेणी के लाभान्वित को 1,000 रुपये प्रति संयंत्र अनुदान।
- लोहे के ड्रम वाले बायोगैस संयंत्रों पर 1,000 रुपये प्रति संयंत्र अतिरिक्त अनुदान।
- झालावाड़ जिले में सृजित वन्य क्षेत्र में बायोगैस संयंत्र स्थापना पर 1,500 रुपये प्रति संयंत्र अनुदान।

राज्य सरकार द्वारा बन्द संयंत्रों की मरम्मत के लिए प्रति संयंत्र 400 रुपये तथा बन्द संयंत्रों को आरम्भ करवाने के लिए प्रति संयंत्र 100 रुपये का अनुदान ग्रामीण कार्यकर्त्ता को देने का प्रावधान है। इसके अतिरिक्त राज्य सरकार द्वारा बायोगैस कार्यक्रमों के प्रचार–प्रसार, संयंत्रों के रख–रखाव के लिए समय–समय पर उपभोक्ता शिविरों का भी आयोजन किया जाता है। राज्य में विगत 16 वर्षों में 60,000 बायोगैस संयंत्र स्थापित किए जा चुके हैं। 1996 तक राज्य के विभिन्न जिलों में स्थापित बायोगैस संयंत्रों की स्थिति निम्नलिखित है :

जिलेवार स्थापित बायोगैस संयंत्र (वर्ष 1996 तक)

अजमेर	2,326
जयपुर	2,001
अलवर	2,526
जैसलमेर	347
बांसवाड़ा	733
जालौर	1,076
बारां	467
झालावाड़	1,760
बाड़मेर	112
झुंझुनू	3,016
भरतपुर	2,221
जोधपुर	2,039
भीलवाड़ा	3,251
कोटा	1,571
बीकानेर	1,481
नागौर	2,098
बूंदी	822
पाली	2,058
चित्तौड़गढ़	2,512
राजसमन्द	350
चूरू	2,584
दौसा	404
सीकर	2,219
धौलपुर	582
सिरोही	754
डूंगरपुर	1,380
टोंक	1,385
गंगानगर	6,593
उदयपुर	6,897
हनुमानगढ़	342
कुल	58,266

स्रोत : राजस्थान सुजस संचय, सूचना एवं जनसम्पर्क निदेशालय।

राजस्थान में स्वरोजगार को प्रोत्साहित किए जाने के उद्देश्य से बायोगैस संयंत्र के कारीगरों को पंजीकृत किया गया है और क्षेत्रीय बायोगैस प्रशिक्षण केन्द्र, उदयपुर में उनके निःशुल्क प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है। 1998–99 के राज्य बजट में बायोगैस कार्यक्रम पर एक करोड़ रुपये व्यय का प्रावधान रखा गया था। राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में बायोगैस संयंत्र से तीन तरफा लाभ हुआ है, किसानों को जलाने के लिए गैस, घरों में रोशनी हेतु गैस बत्ती तथा खेतों के लिए खाद।

स्थिति यह है कि अब समझदार और प्रशिक्षित किसान गोबर को जलाने नहीं, बल्कि बायोगैस संयंत्र में गोबर का घोल डालकर गैस प्राप्त करते हैं। वे संयंत्र से निकाले गए गोबर के घोल को खाद के रूप में भी इस्तेमाल करते हैं और खेतों की पैदावार तथा घर की समृद्धि को बढ़ाते हैं। ❑

सम्भावित है जलाऊ लकड़ी की समस्या

शैलेन्द्र कुमार मिश्र

आदिकाल से ही मानव जंगलों पर निर्भर रहा है। लेकिन दिन–प्रतिदिन मानव को बढ़ती आवश्यकताओं को पूरा करते–करते आज कई जंगल अपना अस्तित्व खो बैठे हैं। जिस गति से मानव वन–सम्पदा का दोहन कर रहा है उससे ऐसा लग रहा है कि वह दिन दूर नहीं जब घर में अन्न तो रहेगा पर खाना पकाने के लिए जलावन उपलब्ध नहीं होगा। जिस गति से आबादी बढ़ रही है उसे देखते हुए यह असम्भव है कि जितने पेड़ काटे जा रहे हैं उतने ही पेड़ लगाकर बड़े कर लिए जाएं।

आंकड़े बताते हैं कि हमारे देश में घरेलू काम में आने वाली ऊर्जा का 68.5 प्रतिशत जलाऊ लकड़ी से ईंधन के रूप में इस्तेमाल होता है। इसमें भी 64.2 प्रतिशत जंगली लकड़ी और झाड़ियों वगैरह से इकट्ठी की जाती है। ईधन के रूप में ऊर्जा प्राप्त करने के नए संसाधनों में निरन्तर प्रगति के बाद भी भारत ही नहीं दुनिया के ग्रामीण इलाकों में ईंधन का मुख्य स्रोत लकड़ी ही है। वनों से जितनी लकड़ी विश्व में हर साल पैदा होती है उसमें से आधी तो चूल्हों में झोंक दी जाती है। वन सम्पदा के लगातार दोहन से आज स्थिति यह है कि जलाऊ लकड़ी की मांग एवं पूर्ति के बीच इतनी बड़ी खाई है कि उसे पूरा करने में कई दशक लग जाएंगे। इतना ही नहीं, पेड़ों की निरन्तर कटाई से उत्पन्न पारिस्थितिकीय परिवर्तन के फलस्वरूप बाढ़, मिट्टी कटाव और अंततः पानी की कमी के रूप में परिलक्षित हो रहा है।

सन् 1973 में पहले ऊर्जा संकट के बाद ही विश्व के सभी राष्ट्रों को इस बात का अचानक अहसास हुआ था कि वे उर्जा के एक ही रूप पर निर्भर होते जा रहे हैं। तभी यह महसूस किया गया कि भविष्य में आकस्मिक रूप से उत्पन्न होने वाले ऊर्जा संकट के लिए आवश्यक अनेक स्रोतों के इस्तेमाल वाले अधिक व्याप्त ऊर्जा–नीति अपनायी जाए। इसके कुछ वर्षों बाद ही विश्व में जलाऊ लकड़ी की कमी हो गई। यह एक गंभीर ऊर्जा संकट था जिसने पूरी तीसरी दुनिया को अपनी चपेट में ले लिया। आज भी हम जलाऊ लकड़ी के संकट से गुजर रहे हैं।

एक अनुमान के अनुसार भारत में वर्तमान स्थिति बरकरार रही तो 13 करोड़ 70 लाख टन जलाऊ लकड़ी की कमी होगी और इस कमी को पूरा करने के लिए आगामी वर्षों में हमें 500 करोड़ रुपये से भी अधिक का विनियोग करके लगभग 3 करोड़ 40 लाख हेक्टेयर भूमि में पेड़ लगाने होंगे तब जाकर हमें 4 टन प्रति हेक्टेयर की दर से सूखी लकड़ी मिल सकेगी। इस समय आवश्यकता महसूस की जा रही है कि जलाऊ लकड़ी मांग और पूर्ति के बीच उपजे असंतुलन को दूर करने के लिए लकड़ी का प्रयोग एकदम बन्द कर दिया जाए। परन्तु ऐसा तभी सम्भव है जब ईंधन आदि के रूप में कोई वैकल्पिक व्यवस्था की जाए। शहरी क्षेत्रों के लिए तो ऐसा सम्भव है किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में इसका

तालिका – 1

देश	वार्षिक कटाई करोड़ घन मी.	कुल कटाई में ईंधन लकड़ी का अनुपात (प्रतिशत)	जलावन लकड़ी का प्राथमिक ऊर्जा में अंशदान (प्रतिशत)
उत्तरी अमरीका	47.50	3.70	0.20
पश्चिमी यूरोप	24.00	13.00	0.70
एशिया	2.00	12.00	1.00
पूर्व सोवियत संघ एवं पूर्वी यूरोप	46.00	22.00	1.80
अफ्रीका	30.00	90.00	58.00
लैटिन अमरीका	30.00	82.00	20.00
सूदूर पूर्व	67.00	86.00	42.00
मध्य पूर्व	7.10	79.00	14.00
केन्द्रीय एशियाई देश (चीन, वियतनाम, मंगोलिया, उत्तरी कोरिया)	20.50	75.00	8.00
विकसित देश	154.00	84.00	29.00

विकल्प ढूंढना होगा। यद्यपि नई उदारीकरण नीति के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में भी पेट्रोलियम गैस की एजेन्सी देकर ऊर्जा संकट पर नियंत्रण पाने का प्रयास किया जा रहा है।

साथ ही ऊर्जा संकट से उबरने के लिए सस्ती जलाऊ लकड़ी का प्रबन्ध करना होगा।

तालिका – 2

जलावन आपूर्ति हेतु विकासशील देशों में वनीकरण की आवश्यकता

सन् 2000 में वन क्षेत्रफल
(हजार हेक्टेयर में)

देश	आवश्यकता	उपलब्धता
भारत	4,000	400
नाइजीरिया	2,000	200
थाईलैण्ड	1,500	200
नेपाल	1,000	100
इथियोपिया	1,000	20
अफगानिस्तान	1,000	20
पेरू	400	100
तन्जानिया	400	50
इक्वाडोर	260	40

कुछ ऐसे वृक्ष लगाने होंगे जो कम समय में उत्पादन देने लगते हैं और उनकी लकड़ी का उपयोग केवल जलाऊ लकड़ी के रूप में ही होता हो। जब तक हम इस समस्या के प्रति गंभीर नहीं होंगे तब तक पर्यावरण के प्रति भी खतरा उत्पन्न होता रहेगा। एक आंकड़े के अनुसार भारत में कुल भू–भाग के 33 प्रतिशत भाग पर पेड़ होने चाहिए किन्तु आज केवल 12 प्रतिशत भाग पर ही पेड़–पौधे हैं जो खतरे का संकेत है।

जलाऊ लकड़ी के लिए पेड़–पौधे लगाने से ईंधन की समस्या तो हल होती ही है पर्यावरण को भी लाभ पहुंचता है। साथ ही यह सामाजिक दृष्टि से भी सार्थक है। पेड़ लगाने के लिए बंजर और ऊसर भूमि का इस्तेमाल करना होगा। अगर ये पौधे ऐसे ही जिनकी जड़ों में रहने वाले जीवाणु हवा से नाइट्रोजन खींचकर बंजर जमीनों को उपजाऊ बना सके तो इनका महत्व और भी बढ़ जाएगा।

कहने का तात्पर्य यह कि वृक्षारोपण कर हम कई प्रकार की समस्याओं से निजात पा सकेंगे। जब तक हम दृढ़ संकल्प नहीं लेंगे तब तक समस्या से निजात पाना सम्भव नहीं है। ❑

(पृष्ठ 28 का शेष) **औद्योगिक विकास के साथ.....**

करना चाहिए।

- बाल श्रमिकों को पढ़ने के लिए अनौपचारिक शिक्षा की सुविधा दी जानी चाहिए।
- स्वयंसेवी संस्थाएं तथा सरकारी प्रशासन दोनों मिलकर फुटपाथ पर और फुटपाथ विहीन बच्चे को निवासी स्कूलों में भर्ती करवाएं और उन्हें शिक्षा की सुविधा प्रदान करें।
- बाल श्रम के खिलाफ एक अभियान चलाया जाए जिसे लोगों में बाल श्रमिक न रखने की भावना उत्पन्न हो।
- बाल श्रम निषेध अधिनियम को सख्ती से लागू किया जाए और बाल श्रमिकों के बारे में बार–बार जांच की जाए।

अगर भारत में बाल श्रमिकों की समस्या को हल करना है तो जिस तरह से चुनाव, साक्षरता अभियान, पल्स पोलियो, अतिवृष्टि और अनावृष्टि में प्रशासन, जिस निष्ठा से काम करता है उसी तरह बाल श्रमिकों की समस्या को सुलझाने के लिए प्रयास किए जाएं। ❑

(पृष्ठ 34 का शेष) **ग्रामीण क्षेत्रों में..**

हद तक ही कम किया जा सकता है, यह भी इस बात पर निर्भर करता है कि उसको पौष्टिक आहार देना कब से प्रारंभ किया गया है।

इस प्रकार सार रूप में यह कहा जा सकता है कि देश की भावी पीढ़ी को कुपोषण से बचाने के प्रयास हमें उसके जन्म से पूर्व ही करने होंगे। सबसे पहले कदम के रूप में बाल–विवाह को पूरी तरह समाप्त करना होगा जिसके परिणामस्वरूप अल्पायु में शिशु जन्म की समस्या से छुटकारा मिल सकेगा। हमें महिलाओं के पोषण पर विशेष ध्यान देना होगा ताकि गर्भ धारण से पहले ही उनमें गर्भ के लिए स्वस्थ आधार तैयार किया जा सके। गर्भावस्था तथा शिशु जन्म के बाद उसको दूध पिलाने के समय तक महिलाओं को अतिरिक्त पौष्टिक आहारों की आपूर्ति बहुत ही आवश्यक है। ❑

बड़ा उपयोगी है नीबू

मुकेश चन्द्र शर्मा

नीबू बड़ी आसानी से तथा सस्ते भाव में मिल जाता है। इसके प्रयोग से अनेक बीमारियों से छुटकारा पाया जा सकता है। लोशन के रूप में इसे काम में लेने से शरीर को स्वस्थ और सुन्दर बनाया जा सकता है। नीबू में विटामिन 'सी' भरपूर मात्रा में होता है। अम्ल विरोधी खनिज तत्वों की प्रचुरता के कारण नीबू विषाक्त तत्वों को शरीर से बाहर निकाल देता है।

सौंदर्य वृद्धि के लिए

- एक चम्मच नीबू के रस में दो चम्मच टमाटर का रस तथा सवा चम्मच ग्लिसरीन मिलाकर चेहरे पर लगाएं। 15–20 मिनट बाद चेहरा साफ पानी से धो लें। इससे त्वचा कोमल और चिकनी रहती है।
- एक चम्मच नीबू के रस के साथ थोड़ा–सा शहद और ग्लिसरीन मिलाकर अच्छी तरह फेंट लें। इसके बाद इसे चेहरे पर लगाएं तथा 15–20 मिनट बाद चेहरा धो लें। इस तरह हर रोज करने से कुछ दिनों के बाद आप देखेंगे कि चेहरे की झुरियां समाप्त हो गई हैं तथा आपकी त्वचा अधिक कांतियुक्त और आकर्षक बन रही है।
- सांवलेपन को दूर करने के लिए दो चम्मच खीरे का रस, एक चम्मच नीबू का रस तथा चुटकी भर हल्दी मिलाकर लगाएं। पंद्रह मिनट के बाद चेहरा साफ पानी से धो लें। लगभग पंद्रह दिनों तक ऐसा करने पर इसका असर साफ नजर आने लगेगा।
- चेहरे और गर्दन के रंग को साफ करने के लिए दो चम्मच नीबू के रस में दो चम्मच कच्चा दूध मिलाकर चेहरे और गर्दन पर लेप करें। लगभग आधे घंटे बाद चेहरा और गर्दन गुनगुने पानी से धो लें। यह रोजाना करें।

मोटापा कम करने के लिए

मोटापा कम करने के लिए संतुलित भोजन तथा व्यायाम अत्यंत आवश्यक है। संतुलित भोजन से तात्पर्य है कि प्रोटीन, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट केवल निश्चित मात्रा में लेने चाहिए। यदि आप चीनी अधिक मात्रा में लेते हैं या चिकनाईयुक्त भोजन अधिक मात्रा में पसंद करते हैं, तो समझिए कि आप मोटापे को बुलावा दे रहे हैं, जो स्वयं अनेक बीमारियों की जड़ है। इसलिए आपको सर्वप्रथम चीनीयुक्त पदार्थ, चिकनाई तथा अधिक तीखे मिर्च–मसालों से बचना होगा। नियमित व्यायाम भी मोटापे को दूर करता है। कभी–कभी उपवास करना भी उपयोगी है।

मोटापे को दूर करने में भी नीबू का रस महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। यदि प्रातः काल आधा नीबू गुनगुने पानी में मिलाकर खाली पेट रोजाना सेवन कर लिया जाए तो इससे मोटापे पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

उपयोगी हैं नीबू के पत्ते भी

नीबू ही नहीं, इसके पत्ते भी बहुत अधिक उपयोगी हैं। तीन–चार पत्ते प्रतिदिन चबाकर खाने से कफ, पित्त और वमन की शिकायत दूर होती है। इन पत्तों को पीसकर और उसमें थोड़ी चीनी मिलाकर सेवन करने से पेचिश, आंव और बवासीर में आराम मिलता है। हाथों में लहसुन, प्याज या मिट्टी के तेल की गंध मिटाने के लिए अपने हाथों पर नीबू के छिलके रगड़ें। इन छिलकों को पालिश से पहले जूतों पर रगड़ने से जूतों पर अधिक चमक आएगी। नीबू के पत्तों की धूनी लेने से हिचकी, सिर दर्द, जुकाम और गले की अनेक बीमारियों में राहत मिलती है। इसके धुएं से मच्छर और बरसाती कीट पतंगे भी भाग जाते हैं।

अन्य

- गुनगुने पानी में नीबू का रस मिलाकर पीने से जुकाम और गले के रोगों में आराम मिलता है। दूध के स्थान पर चाय में नीबू डालकर पीने से भी जुकाम में आराम मिलता है।
- खुजली वाले स्थान पर नीबू का रस मलने से राहत मिलती है। सर्दियों में हाथ–पैर अक्सर फटने लगते हैं। इन पर रात्रि को सोने से पहले नीबू का रस और ग्लिसरीन मिलाकर लगाएं। ग्लिसरीन के स्थान पर गोले का तेल भी काम में लाया जा सकता है।
- बालों में रूसी हो जाने पर उनमें नहाने से पहले नीबू का रस और गोले का तेल मिलाकर लगाएं। इससे रूसी समाप्त होने के साथ ही, बाल मुलायम और चमकीले होंगे।
- मिश्री के साथ नीबू का रस मिलाकर पीने से लू का प्रकोप शीघ्र शांत हो जाता है। हैजा हो जाने पर रोगी को नीबू के रस के साथ प्याज तथा पोदीने का रस मिलाकर पिलाएं।
- सुबह खाली पेट नित्य प्रति एक या दो नीबू का रस पानी में मिलाकर पीने से कब्ज ठीक होती है। इससे जी मिचलाना, पेट की गैस तथा भूख कम लगना जैसी शिकायतें भी दूर होती हैं।
- नीबू के रस में सफेद जीरा, अजवाइन, सेंधा नमक मिलाकर सुखा लें और उसका चूर्ण बनालें। इस चूर्ण को नित्य प्रति खाने से पाचन शक्ति बढ़ती है।
- आधा गिलास पानी में एक नीबू का रस निचोड़ लें और उसमें आधा चम्मच सोडा और शक्कर मिलाकर पीने से पेट का दर्द दूर होता है।

नीबू को किसी भी रूप में सेवन करने से पूर्व यह अवश्य देख लें कि आप पथरी या इसी प्रकार के अन्य किसी खतरनाक रोग से ग्रस्त न हों। उस स्थिति में चिकित्सक से पूर्व परामर्श लेना आवश्यक है। ❑

देश के आर्थिक-विकास में औषधीय पौधों की खेती का महत्व

कौशल किशोर चतुर्वेदी*

वनस्पति विविधता की दृष्टि से भारत एक धनी देश है। यहां की धरती पर अभी तक 45,000 तरह की वनस्पतियां जानी–पहचानी जा चुकी हैं जिनमें एक तिहाई तो औषधि के रूप में उपयोगी पाई गई हैं। आज की तरह जब देश में अस्पताल, डिस्पैंसरियां, दवाखाने आदि नहीं थे तब रोगों का इलाज पूरी तरह पौधों से ही किया जाता था। आज भी बहुत से ऐसे रोगों का निदान पौधों से सम्भव है, जिनका आधुनिक चिकित्सा में कोई उपचार नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी औषधीय पौधों का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाता है। आदिम–जातियां जो आज भी विकास से अछूती हैं, पूरी तरह जड़ी–बूटियों पर निर्भर हैं। लेखक जो स्वयं शोधार्थी रहा है ने अपने वानस्पतिक सर्वेक्षण के दौरान यह पाया है कि गोंड, हलवा, कलार, मारिया, कोल, झील आदि जन–जातियां अपने सभी तरह के रोगों के उपचार में औषधीय पौधों का शत–प्रतिशत इस्तेमाल आज भी कर रही हैं। इतना ही नहीं आधुनिक भैषज प्रयोगशालाएं भी औषधि निर्माण में हर्बल्स का अधिक से अधिक प्रयोग कर रही हैं।

हमारे देश में जितने तरह के औषधीय पौधे हैं उतने किसी अन्य देश में नहीं। कामराज, सर्पगन्धा, अश्वगन्ध, सतावर, जिनसेंग, कालकी मूसली, अशोक, सफेद मूसली, ब्राह्मी, पुनर्नवा, नीम, तुलसी, गिलोय, इफिड्रा आदि जड़ी–बूटियां भारतीय धरती की अमूल्य निधि हैं। इनका उपयोग विभिन्न प्रकार की औषधियां बनाने में बहुतायत से किया जाता है। औषधीय पौधों के उपयोग को देखते हुए इनकी खेती को प्रोत्साहन दिए जाने की आज नितान्त आवश्यकता है। जंगलों के नष्ट होने से इनकी प्रजातियां धीरे–धीरे कमी होती जा रही है, जो बची भी हैं उनका भी दोहन जारी है। बहुत–सी जड़ी–बूटियां नष्ट होने के कगार पर हैं। सर्पगन्धा उनमें से एक है। इससे उच्च रक्त–चाप कम करने की महत्वपूर्ण औषधि बनाई जाती है। सफेद मूसली, काली मूसली, कामराज आदि औषधीय पौधों पर भी संकट के बादल मंडरा रहे हैं। यदि औषधीय पौधों की खेती को प्रोत्साहित नहीं किया गया तो एक समय ऐसा आ सकता है, जब भारतीय जंगलों में इनकी कमी हो जाएगी तथा बहुत से पेड़–पौधे हमेशा के लिए विलुप्त हो जाएंगे, जिनसे देश का औषधि उद्योग प्रभावित होगा। दवाओं की गुणवत्ता में कमी आएगी। इन्हें दूसरे देशों से आयात करना होगा। जिनसेंग एक ऐसा औषधीय पौधा है, जिसके आयात में देश की एक बड़ी रकम खर्च होती है। इसे 'चमत्कारिक जड़ी' के रूप में माना जाता है। इससे बहुत से रोगों की दवा तथा शीतल पेय बनाए जाते हैं। चीन में इसकी खेती विगत 2000 वर्षों से की जा रही है। चीन तथा कोरिया इस जड़ी के मुख्य निर्यातक देश हैं। कोरिया में निर्यात से होने वाली कुल आय का तीन–चौथाई तो सिर्फ जिनसेंग से ही प्राप्त होता है। जिनसेंग के निर्यात से अमरीका को प्रतिवर्ष 3.5 करोड़ डालर की आय होती है। इसी तरह चीन को भी काफी मुनाफा होता है। भारत में भी इसकी खेती करके मुनाफा कमाया जा सकता है।

भारत में औषधीय पौधों की खेती करके इनके निर्यात को बढ़ावा दिया जा सकता है। इससे देश का आर्थिक–विकास होगा तथा ग्रामीणों को रोजगार का एक अच्छा साधन

* निवर्तमान वरिष्ठ अनुसन्धान अध्येता, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

तालिका

कुछ महत्वपूर्ण औषधीय पादप तथा उनके उपयोग

औषधीय पादप	सामान्य नाम	मुख्य उपयोग
1. पैनेक्स चिनसेंग	जिनसेंग	ज्वर में दर्द निवारक, स्फूर्तिदायक, पित्तनाशक तथा पेट सम्बन्धी रोगों में
2. विथानिया सोमनीफेरा	अश्व–गन्ध	शारीरिक शक्ति बढ़ाने में,
3. राउवोल्फिया सर्पेन्टीना	सर्पगन्धा	उच्च रक्त–चाप कम करने में
4. ऐसपैरागस रेसीमोसस	सतावर	टानिक बनाने में,
5. ब्लिफैरीस्पर्मम सब्सेसाइल	रसना जड़ी	शीतल पेय बनाने तथा स्मरण–शक्ति बढ़ाने में,
6. क्लोरोफाइटम ट्यूबरोसम	सफेद मूसली	शक्तिवर्द्धक
7. करकुलीगो आरक्वायाडिस	काली मूसली	शक्तिवर्द्धक तथा ज्वर
8. डायस्कोरिया प्यूबर	कन्द	त्वचा रोगों में
9. ग्लासोगाइन बाइडेन्स	कामराज	काम–शक्ति बढ़ाने में,
10. टीनोस्पीरिया कार्डीफोलिया	गिलोय	काली खांसी तथा श्वास रोग में
11. सेन्टेला एसीयाटिका	ब्रह्मी	ब्रेन टानिक बनाने में,

मिलेगा। औषधीय जड़ी–बूटियों का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अपना अलग स्थान है। ये काफी महंगी मिलती हैं। यदि अपने देश में सिर्फ जिनसेंग की खेती बड़े पैमाने पर होने लगे तो प्रतिवर्ष इसके आयात में खर्च होने वाले लाखों रुपये बच जाएंगे। हाल में इसे नगालैण्ड के जंगलों में खोजा गया है। इसी तरह ब्राह्मी, सफेद मूसली, काली मूसली, कामराज, गिलोय सर्पगंधा, अश्वगंधा, रसना जड़ी, सतावर, कंद, इफिड्रा, पुनर्नवा, चिचिन्ढा, जटामांसी आदि महत्वपूर्ण औषधीय पौधों की खेती को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ये देश के विकास में भागीदार होंगे। इस कार्य को वन विभाग तथा उद्यान विभाग द्वारा बड़े पैमाने पर आसानी से किया जा सकता है। इन विभागों को अपने 'मास्टर प्लान' में इस कार्य को शामिल करना चाहिए। ग्रामीणों को भी इसके लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसे वे रोजगार के एक साधन के रूप में अपना सकते हैं। यह उनके लिए लाभकारी होगा। इसके अलावा भैषज प्रयोगशालाओं द्वारा भी औषधीय पौधों की खेती कराई जानी चाहिए, जिससे इनका निर्यात करके अच्छा लाभ अर्जित किया जा सके।

(पृष्ठ 21 का शेष) **वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण विकास.....**

वसूली की स्थिति सन्तोषजनक नहीं है।

इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि ग्रामीण विकास में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने सफलता प्राप्त की है परन्तु ग्रामीणों को सुविधा देने की दिशा में जो प्रयास किए गए हैं वे पर्याप्त नहीं है। ग्रामीण आज भी अपनी बचतों को घरों में रखते हैं और उधार के लिए जमींदारों और साहूकारों पर निर्भर हैं। इन बैंकों को आज भी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इन बैंकों को ऐसी जगह अपनी शाखाएं खोलनी पड़ती हैं जहां यातायात, डाकतार तथा भवन सुविधाएं नहीं है। शिक्षा और चिकित्सा की सुविधा न होने से क्षेत्रीय भाषा का ज्ञान रखने वाले प्रशिक्षित तथा कुशल कर्मचारी नहीं मिल पाते जिसके कारण ग्रामीणों से सम्पर्क बनाए रखना कठिन होता है।

सरकार द्वारा अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास को प्रमुखता दिए जाने के कारण क्षेत्रीय बैंकों का विकास तथा विस्तार महत्वपूर्ण हो जाता है। इन बैंकों को पूर्णतया सफल होने में समस्या इन बैंकों के कार्यों को ठीक प्रकार से क्रियान्वयन न होने की है। जिन उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को लेकर इन बैंकों की स्थापना की गई और जिन तरीकों तथा प्रक्रियाओं को अपनाया गया वह उचित होते हुए भी कुशल क्रियान्वयन के अभाव में पूरे नहीं हो पा रहे हैं। अतः क्रियान्वयन को आवश्यक और निष्पक्ष बनाया जाए तथा ग्रामीण जनता की मानसिकता में परिवर्तन किया जाए तो सम्भव है कि ये बैंक ग्रामीण विकास कर गांव और ग्रामीणों को आर्थिक रूप से सम्पन्न बना सकें। ❑

पूरे किये गये वायदों का एक वर्ष

यह वर्ष, चहुंमुखी उपलब्धियों का रहा, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में। एक वर्ष पूर्व किए गए वायदों को सफलतापूर्वक पूरा किया गया। ग्रामीण भारत नई आशाओं और आकांक्षाओं के साथ आगे बढ़ रहा है। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा बनाए और कार्यान्वित किए गए कार्यक्रमों में विशेष रूप से गांवों की काया पलटने पर बल दिया। समाज के अत्यधिक वंचित वर्गों पर विशेष ध्यान दिया गया।

- **स्थानीय शासन को मजबूत बनाना, लोगों की भागीदारी को संस्थागत रूप देना और महिलाओं को सशक्त बनाना**
  पंचायती राज–पंचायती राज संस्थाओं को पर्याप्त प्रशासनिक और वित्तीय शक्तियां प्रदान करने और इनके नियमित चुनाव कराने के लिए राज्य सरकारों को राजी किया गया। अधिकतर राज्यों में चुनाव संपन्न हुए। चुने गए 34 लाख प्रतिनिधि, जिनमें 10 लाख महिलाएं भी शामिल हैं, 2.34 लाख पंचायतों का कामकाज देख रहे हैं। वर्ष 1999–2000 "ग्राम सभा वर्ष" के रूप में मनाया गया।
- **गरीब और वंचित लोगों के लाभ को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण आवास को प्राथमिकता**
  भारत सरकार का ग्रामीण क्षेत्रों में हर साल लगभग 25 लाख मकान बनाने का लक्ष्य है। इसके लिए चालू वर्ष में 1,710 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।
- **ग्रामीण क्षेत्रों में जीवनस्तर में सुधार लाना**
  ग्रामीण क्षेत्रों की महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करने से संबंधित समयबद्ध कार्यक्रमों को चलाने के उद्देश्य से "प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना" की शुरुआत की गई। इस कार्यक्रम में **ग्रामीण सड़क, ग्रामीण आवास और ग्रामीण पेयजल आपूर्ति जैसे तीन महत्वपूर्ण मुद्दे शामिल हैं।**
- **अगले पांच वर्षों में सभी गांवों को पेयजल उपलब्ध कराना**
  अगले पांच वर्षों में सभी ग्रामीण इलाकों में स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने के विशेष लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए मंत्रालय में नया पेयजल आपूर्ति विभाग बनाया गया है। वर्ष 1999–2000 के दौरान लगभग 75,000 ग्रामीण पर्यावासों को पूर्ण अथवा आंशिक रूप से पेयजल की सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं। सामुदायिक भागीदारी को संस्थागत रूप देने के लिए इस क्षेत्र में सुधार किए गए हैं।
- **बेरोजगारी दूर करना और स्वरोजगारी ग्रामीण कारीगरों को विपणन सहयोग प्रदान करना**
  गांव के गरीब लोगों की पारिवारिक आमदनी बढ़ाने तथा उनकी अन्य जरूरतों और उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप कार्यक्रम बनाने के लिए स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की शुरूआत की गई। ग्रामीण उत्पादों के विपणन को बढ़ावा देने के लिए मंत्रालय ने क्षेत्रीय मेलों के आयोजन में सहयोग दिया तथा भारतीय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेला, 1999 और अंतर्राष्ट्रीय मेलों में भाग लिया।
- **ग्रामीण क्षेत्रों को सड़क मार्ग से जोड़ना**
  स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पहली बार दसवीं योजना अवधि (2007) के अंत तक 500 अथवा इससे अधिक की आबादी वाले प्रत्येक गांव को पक्की सड़कों के माध्यम से जोड़ने के लिए एक सुविचारित एवं समयबद्ध कार्यक्रम – "प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना" तैयार किया गया।
- **स्थानीय प्रतिभा और संसाधनों का उपयोग–ग्रामीण आधारभूत ढांचे को मजबूत बनाने पर बल**
  ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत ढांचे की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, ग्राम स्तर पर आवश्यकता अनुरूप ग्रामीण आधारभूत ढांचा प्रदान करता है। इस योजना के अंतर्गत धनराशि सीधे ग्राम पंचायतों को दी जाती है तथा ग्राम स्तर पर ही निर्णय लिए जाते हैं।
- **गांव के गरीबों को खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराना**
  अत्यधिक निर्धन वृद्ध नागरिकों की खाद्य सुरक्षा के लिए इस वर्ष नये कार्यक्रम "अन्नपूर्णा" की शुरूआत की गई।
- **ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं की व्यक्तिगत मर्यादा तथा सम्मान बनाए रखना**
  केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम का पुनर्गठन किया गया ताकि इस क्षेत्र में सामुदायिक नेतृत्व एवं जनता की भागीदारी को प्रोत्साहन मिले। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक स्तर पर स्वच्छता को बढ़ावा देने के लिए मुख्य मुद्दे के रूप में ग्रामीण विद्यालय स्वच्छता की शुरूआत की गई।

"आर्थिक विकास का कोई विशेष अर्थ नहीं रह जाता यदि हमारे देश की अधिकांश जनता भोजन, स्वास्थ्य सुविधाओं, घर, स्वच्छ पेयजल और सम्मानजनक जीवन की अन्य मूलभूत सुविधाओं से वंचित है।"

– श्री अटल बिहारी वाजपेयी

आर एन. / 708 / 57
डाक–तार पंजीकरण संख्या :डी (डी एल) 12057 / 2000
आई.एस.एन.एन. 0971–8451
पूर्व भुगतान के बिना के अधीन डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक
में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)–55

R.N./708/57
P&T Regd. No. D (DL) 12057/2000
ISSN 0971-8451
Licenced under (DN)-55
to Post without pre-payment of DPSO, Delhi-54

श्रीमती सुरिन्दर कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली–110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक: अनवरी प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा. लि. डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–II, नई दिल्ली–20 संपादक: बलबीर सिंह मदान